मंजरी

स्त्री के मन की

अंक–13

अकेले हैं

....तो क्या ग़म है

एकल महिलाओं पर विशेष

Sulabh Sanitation Movement

SULABH TOILET COMPLEX

Sulabh International
Social Service Organisation

The healthy sign of self-reliance & self-esteem...

Sudha

वादा शुद्धता का

That glow of self-esteem and pride on the face of milk-farmers of Bihar. That radiance of good health on the families of the state. These are the rewards we take greatest pride in. As the leading milk producers of Bihar and Jharkhand, COMFED procures 19 lakh litres of milk from over 11 lakh milk-farmers through 20,534 co-operative societies each day. Selling this milk and sumptuous milk products at pocket-friendly prices, we are ushering in a healthy prosperity in the state.

A proud example of White Revolution in Bihar.

Toll Fee No. **18003456199**

COMFED

BIHAR STATE MILK CO-OPERATIVE FEDERATION LTD.

E-mail: comfed.patna@gmail.com, Website:www.sudha.coop

SHARAD

takshila
connect
to the
universe

परिवर्तन
PARIVARTAN

An Integrated Rural Community Development Initiative of Takshila Educational Society

ग्रामः नरेन्द्रपुर, प्रखंडः जीरादेई, जिलाः सिवान-८४१४४६, बिहार

संकल्पना

इक्विटी फाउंडेशन लंबे अरसे से एक वेब पत्रिका शुरू करने के बारे में सोच रहा था। मकसद था महिला और समाज के मुद्दों को शिद्दत से उठाना। जब हमने चीजों को एक साथ कर उसे पत्रिका के रूप में सजाने के बारे में सोचना शुरू किया तो इस क्रम में कई लोगों से जुड़े। हमने महिलाओं को पत्रिका से जोड़ने की कोशिश की। हम दोस्तों से मिले और परिचितों से बात की। महिलाओं के सामाजिक समूहों और शिक्षाविदों के एक साथ जुड़ने के बाद जो स्वरूप सामने आया वह है 'मंजरी'।

मंजरी यानी कोंपल। शाखों में फूटने वाली नन्ही पत्तियां। नई शाखों का सृजन करने वाले इन कोंपल को कुम्हलाने से बचाना जरूरी है नहीं तो पूरे पेड़ का विस्तार कुंद हो जाएगा। ठीक उसी तरह स्त्री के मन की मंजरी को सहेजने की जरूरत है वरना पेड़रूपी समाज विकृति का शिकार हो जाएगा। हमारा प्रयास इसी मंजरी को पुष्पित पल्लिवत करने का है जो औरत की सोच और उसकी कोशिश को सही दिशा प्रदान कर सके।

मंजरी के सृजन के दौरान पहले तो 10–30 लोगों का एक ढीला–ढाला समूह बना। विचार आते गए। अलग–अलग विषयों और मुद्दों पर। समूह में कुछ अनमनी महिलाएं थीं तो कुछ सहानुभूति दिखाने वाले पुरुष भी। कुछ महज एक या दो बैठकों में शामिल हुए तो कुछ जब मन में आया, आ गए। बाकी बचे लोगों ने 'मंजरी' को मुकाम पर ले जाने का दायित्व अपने कंधों पर लिया। 'मंजरी' का लक्ष्य एक ऐसा मंच उपलब्ध कराना है जहां बुद्धिजीवियों को उनकी खुराक मिले तो शोधकर्ताओं की जिज्ञासा शांत हो। क्रियान्वयन के लिए बहस और तर्क के रास्ते हमेशा खुले रहें। इक्विटी की लगातार कोशिश रही है शोध और क्रियान्वयन के बीच की दूरी को पाटना। ऐसे में हमारा मानना है कि शोध तब तक अप्रासंगिक हैं जब तक कि इनका लोगों की जिंदगी और उनके क्रियाकलापों से जुड़ाव न हो। ठीक इसी तरह सिविल सोसायटी के तौर पर अगर हम जमीनी सच्चाई से वाकिफ न रहें, जिनमें सामाजिक प्रक्रियाएं और ऐतिहासिक मूल्यों का समावेश है और जो समाज में रहने वाले लोगों के मूल्यों और उनके चरित्र को आकार देते हैं, तो किसी भी कोशिश का कोई मतलब नहीं रहता है।

'मंजरी' एक उद्यम है, क्रियाशीलता को शोध आधारित रचना और आलोचना के नजरिये से देखने का जो महिला अधिकारों के साथ–साथ जीवन के हर पलू को इंगित करे। नियमित गैर सरकारी संगठनों और अकादमिक तंत्रों से इतर 'मंजरी' राजनीति और आदर्शवादिता को लांघ कर सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक सुधारों को सांस्कृतिक संवेदनशीलता के आधार पर मापती है। 'मंजरी' उन तमाम कार्यकर्ताओं, विद्वानों, शिक्षाविदों, पत्रकारों, प्रोफेशनल, गृहणियों और नीति निर्धारकों द्वारा पढ़ी जाएगी जो किसी समस्या के लिए समाधान आधारित नवीन दृष्टि और पृथक सोच रखते हैं। यह पत्रिका अपने पाठकों को जेंडर आधारित मुद्दों को जैविक और सामाजिक आधार पर परखने की छूट देती है। व्यक्ति और समाज की विचारधारा में जेंडर को लेकर क्या बदलाव आये और उनका क्या असर हुआ, इसकी पूरी पड़ताल करने की आजादी लोगों को होगी। यह पत्रिका एक कोशिश है पड़ताल की प्रवृत्ति को जगाने की ताकि लोग तेजी से बदलते और विविधताओं से भरे समाज में पूरी क्षमता से काम करने को तैयार हो सकें जिसमें महिलाओं के प्रति भेदभाव भी एक अहम मुद्दा होगा। महिला समानता और अधिकारों पर 'मंजरी' के दखल से उन बेशुमार कार्यकर्ताओं, संगठनों और विद्वजनों को फायदा होगा जो दहेज, यौन प्रताड़ना, महिला अधिकारों, महिला आरक्षण, आर्थिक सुधार और अल्पसंख्यक समुदायों के निजी कानूनों में रुचि रखते हैं।

पत्रिका का मकसद

इक्विटी फांडेशन खुद को सुविधाविहीन महिलाओं को उनकी पूर्ण क्षमता से अवगत कराने और समाज में उनके क्रियाशील प्रभुत्व को स्थापित कराने की दिशा में वाहक के तौर पर देखता है। देश के विकास के हर क्षेत्र में महिलाओं की समान भागीदारी की राष्ट्रीय नीति तभी सफल हो पाएगी जब महिलाओं की भूमिका और उनके योगदान को कमतर आंकने वाले संस्थान और विचारों को हतोत्साति किया जाये या उनका पूरी तरह सफाया किया जाय। 'मंजरी' की परिकल्पना समाज और अर्थव्यवस्था में महिलाओं के जीवन और उनके स्तर को प्रभावित करने वाले विचारों के निर्माण, विकास और उनके प्रसार के लिए की गई है। बारहवीं पंचवर्षीय योजना के परिप्रेक्ष्य में समानता संबंधी मुद्दों को इस प्रकार समग्र रूप में देखने की जरूरत है जो असमानता की अंतरवर्गीय विशेषताओं को जाहिर कर सके। समानता पर आधारित 'मंजरी' के ज्यादातर आलेख भिन्न–भिन्न समूहों को निशाने पर रखते हैं जो कुछ हद तक बेद जरूरी भी है। इसलिए यह पत्रिका कुछ समूहों के कुछ विशेषाधिकारों के पूर्ण निष्कासन और अंतरवर्गीय दृष्टिकोणों के स्थापन के बीच नियंत्रक की भूमिका में होगी जो नीति निर्धारण और योजनाओं के क्रियान्वयन के दौरान असमानता को उसके तमाम स्वरूपों के साथ सामने रखने में कारगर होगी। ऐसे में इसका मकसद लैंगिक भेदभाव के निर्मूलन की ओर वह विवेचनात्मक चर्चा छेड़ने का है जो वर्तमान परिदृश्य में शोधों का एजेंडा तय कर सके और एक बेहतर वैकल्पिक प्रस्ताव का सृजन कर सके। अब तक यह संगठन कार्यशाला, कांफ्रेंस और अन्य सार्वजनिक आयोजनों के जरिये अपनी प्रतिबद्धता दर्शाता रहा है लेकिन अब इस पत्रिका के माध्यम से यह क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय अतिथि लेखकों, जिनमें विद्वजन, अधिवक्ता, सरकार, पत्रकार, फिल्म निर्माता, कवि और सामाजिक कार्यकर्ता हैं, को जोड़ने की कोशिश कर रहा है।

संपादकीय

संरक्षण

पद्मश्री डा. उषा किरण खान
प्रख्यात लेखिका एवं साहित्यकार

मणिकांत ठाकुर
प्रख्यात पत्रकार

प्रो. भारती एस. कुमार
प्रोफेसर (सेवा.) इतिहास, पटना विवि

डा. रेणु रंजन
प्रोफेसर (सेवा.), समाजशास्त्र पटना विवि

प्रो. डेजी नारायण
प्रोफेसर, इतिहास, पटना विवि

परामर्श

मनीष कुमार
ब्यूरो चीफ, एन.डी.टी.वी. बिहार

कीर्ति
नेशनल कोऑर्डिनेटर, कैरीटास स्विट्जरलैंड (CARITAS Switzerland)

डा. शरद कुमारी
प्रोजेक्ट ऑफिसर, एक्शन एड
सचिव, बिहार महिला समाज

अंजिता सिन्हा
पत्रकार

डा. मधुरिमा राज
लेखिका

'एकल महिला', विवाह मॉडल के बाहर जीवन जीने वाली सभी औरतों के लिए साझा संबोधन है। विधवा, तलाकशुदा, छोड़ दी गईं तथा विवाह की तय उम्रसीमा को पार कर चुकीं बिनब्याही स्त्रियां इस संबोधन की साझीदार हैं। भारत में औरतों का मुख्य काम शादी करना, बच्चे पैदा करना (वो भी बेटा) और परिवार का पालन करना है। यदि कोई महिला अपने पति को खो देती है–पति की मृत्यु हो जाने पर अथवा पति द्वारा छोड़ दिए जाने पर–तो इसमें पूरा दोष उस महिला का माना जाता है और समाज की नजर में उसकी गरिमा समाप्त हो जाती है। अगर वो अपने पति को छोड़ देती है, पत्नी के रूप में अपनी भूमिका को नकार देती है तब तो वो समाज के लिए खतरनाक ही बन जाती है। ठीक इसी तरह, यदि कोई स्त्री स्वेच्छा से विवाह करने से इनकार कर देती है तो उसे विचित्र और तिरस्कृत चीज मान लिया जाता है। ये रूढ़िवादी सोच पूरे भारत में एक समान रूप से पाई जाती है, न केवल गांवों में बल्कि शहरों और शिक्षित समुदायों में भी।

नोबेल पुरस्कार विजेता अमर्त्य सेन का यह कथन कि लोकतंत्र में लोगों को अपनी पहचान चुनने की स्वतंत्रता होनी चाहिए, भारत में यथार्थ प्रतीत होता है। ऐसे समाज में जहां औरत की पहचान पुरुष के साथ उसके संबंधों से बनाई जाती है, वहां 2011 की जनगणना के आंकड़े ये खुलासा करते हैं कि आज 3.6 करोड़ यानी 7.4 प्रतिशत से अधिक महिलाएं एकल हैं।

एकल महिलाओं को न केवल असंख्य सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है बल्कि अपने ही परिवारजनों द्वारा दी गई भावनात्मक और शारीरिक यातनाओं को भी झेलना पड़ता है। अपनी रोज की चुनौतियों का सामना करने के लिए उन्हें लगातार साहस की जरूरत होती है। ऐसी महिलाओं से मिलने के बाद हमने जाना कि समाज में एकल औरतों के लिए जगह बनाकर उनकी कई समस्याओं को आसानी से सुलझाया जा सकता है। इक्विटी फाउंडेशन ने एक्शन एड के सहयोग से इन महिलाओं को उनका स्थान देने की ठानी है और इसके लिए एक राज्यस्तरीय परामर्श कार्यशाला का आयोजन कर उनसे मिलने और उन्हें भी इस अभियान में सहभागी बनाने की कोशिश की है। हमारी कोशिश राज्य सरकार पर दबाव बनाने की है ताकि वो एकल महिलाओं की समस्याओं को सुलझाने की दिशा में बढ़े और उनके लिए योजनाएं, कानूनी सहायता एवं हिंसा के विरुद्ध आपसी सहयोग व साहस का माहौल बनाया जा सके।

हम चाहते हैं कि यह कार्यशाला कमजोर एकल महिलाओं के लिए हिंसा के विरुद्ध खड़ा होने का माध्यम बन सके। एकल महिलाओं के प्रति समाज का नजरिया बदलने के लिए राष्ट्रीय और स्थानीय स्तर पर पहले ही कई प्रयास किए जा चुके हैं और उनके सकारात्मक परिणाम भी प्राप्त हुए हैं। एकल औरतों के प्रति माहौल में सुधार के लिए उन्हें मंच प्रदान करने से उनका अकेलापन और असहाय होने की भावना दूर होती है और वे पूरी हिम्मत से समूह के साथ खड़ी होती हैं।

ये बताने की आवश्यकता नहीं है कि, एकल महिलाओं की समस्याओं और उनके अधिकारों की वकालत हर स्तर पर करना ही हमारा ध्येय होना चाहिए। परंपराओं से परे एकल महिलाओं की परिभाषा में सभी विधवा, तलाकशुदा और अलग रह रहीं औरतें (सभी आयु की) तथा 18 वर्ष या उससे अधिक की सभी अविवाहित महिलाओं को शामिल किया जाता है। हम जानते हैं कि एकल महिलाएं सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक–सभी मोर्चों पर सबसे अधिक कमजोर होती हैं इसलिए हमें यकीन है कि उनकी स्थिति को मजबूत बनाने से सभी औरतों की स्थिति मजबूत बनेगी क्योंकि तभी उन्हें परिवार और विवाह के दबाव से मुक्ति का विकल्प प्राप्त हो सकेगा।

हमारी बात

देश में एकल महिलाओं की संख्या कुल महिलाओं की संख्या का करीब 15 प्रतिशत है और उनकी गिनती 2001 की जनगणना के बाद से लगातार बढ़ती जा रही है। 2011 की जनगणना में देश में औरतों की आबादी में 18.3 प्रतिशत का इजाफा हुआ है लेकिन इसी समय में एकल महिलाओं की आबादी में 39.11 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई है। हम अपने प्रयासों को एक्शनएड, नेशनल फोरम फॉर सिंगल वीमेन्स राइट्स, राज्य सरकार, मीडिया तथा नागरिक समाज के सहयोग से आगे ले जाना चाहते हैं। अतः इस कार्यशाला में हमने एकल महिलाओं को केंद्र में रखते हुए एक मांगपत्र प्रस्तुत किया जिसमें मांगों और सुझावों को ठोस अनुशंसाओं की शक्ल में मंत्रालय के सामने रखा गया। आज एकल महिलाएं भारत के लिए एक सशक्त सेना साबित हो सकती हैं और हम न्याय तथा सम्मान की उनकी लड़ाई में दृढ़ता से उनके साथ खड़े हैं। निश्चित रूप से आगे का रास्ता उनके लिए बहुत आसान नहीं होगा! तो क्या, अब तक की यात्रा में चुनौतियों का सामना नहीं किया गया है! और फिर, क्या हमने उन रास्तों को पार नहीं किया है, बहादुरी से, एक–दूसरे का हाथ थामे, एक बेहतर भविष्य के लिए! हां, उज्ज्वल भविष्य हम सबका इंतजार कर रहा है। और इस मोड़ पर किया गया एक भी प्रयास हमें उस सुनहरे भविष्य के एक कदम और करीब ले जाएगा।

यह कार्यशाला एकल महिलाओं के पास सूचना, प्रशिक्षण, जागरूकता, उनके आर्थिक, वैधानिक, सामाजिक तथा संपत्ति पर अधिकार के बारे में जानकारियों के साथ पहुंची (खासकर घर और जमीन संबंधी अधिकार), उनके व्यक्तित्व और नेतृत्व की क्षमता के विकास, बेहतर कृषि और कार्य के तरीकों के बारे में उन्हें अवगत कराते हुए जिससे कि वे सरकार की मौजूदा योजनाओं का लाभ ले सकें और व्यापार एवं वाणिज्य के लिए लोन प्राप्त कर सकें। कार्यशाला का उद्देश्य एकल महिलाओं तक पहुंचना और उनके पुनर्वास के लिए कार्यक्रम चलाने, उनके बच्चों का जीवनस्तर सुधारने तथा परिवार और समाज से सम्मान पाने के लिए जोरदार वकालत करना था।

सरकारी योजनाओं के कार्यान्वयन को भी सुसंगत बनाने की जरूरत है तथा इस बात पर सख्त निगरानी रखने की जरूरत है कि जो निधि एकल महिलाओं के कल्याण के लिए जारी की जाती है वो वास्तव में उनके पास पहुंचती है या भ्रष्ट अधिकारियों, दलालों, एजेंटों या बिचौलियों के पास पहुंच जाती है। यहां, स्वयंसेवी संगठनों तथा बुद्धिजीवी नागरिकों, महिला कार्यकर्ताओं तथा जमीनी स्तर पर काम कर रहे समाजसेवियों की भूमिका को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। शिक्षा तथा प्रबुद्धता महिलाओं को जंजीरों में जकड़ने वाले सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक बंधनों को तोड़ने में बड़े सहायक हो सकते हैं। हम अपने विचारों को हितधारकों के साथ साझा करें और उन उपायों की तलाश करें जो एकल महिलाओं के सशक्तीकरण में सहायक हो सकते हैं।

Nsrivastava

नीना श्रीवास्तव

मुख्य संपादक

नीना श्रीवास्तव

संपादक

दीपिका झा

शोध

नीना श्रीवास्तव
दीपिका झा

प्रबंधन/व्यवस्था

राहुल कुमार

प्रकाशन

इक्विटी फाउंडेशन

सहयोग

सुलभ इंटरनेशनल
सुधा डेयरी
तक्षशिला एजुकेशनल सोसायटी
पावरग्रिड कार्पोरेशन
द ऑफसेटर, पटना
बंसल ट्यूटोरियल, पटना
इंटरनेशनल स्कूल, पटना

संपर्क

इक्विटी फाउंडेशन
123 ए, पाटलीपुत्र कॉलोनी
पटना, 13
फोन : 0612-2270171

ई–मेल
equityasia@gmail.com
वेबसाइट
www.emanjari.com

© इक्विटी फाउंडेशन

अतिथि संपादक

एकल औरतें : तथ्य और आंकड़े

डॉ. गिन्नी श्रीवास्तव

(मूल रूप से कनाडा की नागरिक डॉ. गिन्नी श्रीवास्तव ने अपना पूरा जीवन भारत की विधवाओं तथा एकाकी महिलाओं के कल्याण में लगा दिया। वे उदयपुर की संस्था नेशनल फोरम फॉर सिंगल वीमेन्स राइट्स की प्रमुख हैं। उनके अथक प्रयासों को देखते हुए 2005 में उन्हें नोबेल शांति पुरस्कार के लिए 1000 महिलाओं की श्रेणी में नामित किया गया था। उन्हें 2014 का रानी रुद्रमादेवी पुरस्कार दिया गया जो उन्हें माननीय राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी ने प्रदान किया।)

इस पितृसत्तात्मक समाज में 'एकल महिलाओं' की व्याख्या उस सांस्कृतिक सच्चाई के विरुद्ध की जाती है जो स्त्री और पुरुष के बीच विवाह को 'मानदंड' मानती है। अगर कोई महिला निर्धारित सांस्कृतिक उम्र के भीतर विवाह नहीं करती है तो उसे 'एकल' कहा जाता है। नेशनल फोरम फॉर सिंगल वीमेन्स राइट्स एकल महिलाओं को इस प्रकार परिभाषित करता है, '' वे महिलाएं जो शादी या शादी जैसे किसी रिश्ते के द्वारा किसी अन्य व्यक्ति के साथ नहीं रह रही हैं।'' यानी कि एक बार फिर एकल महिलाओं की परिभाषा उस 'मानदंड' के विरुद्ध की जा रही है जो महिलाओं को किसी–न–किसी पुरुष के साथ रहने की बात करता है। इस तरह से देखा जाए तो, एकल महिलाएं वे हैं जो:

विधवा हैं
अलग रह रही हैं –परित्यक्ता, निकाल दी गईं, छोड़ दी गईं, या खुद छोड़ आईं
तलाकशुदा हैं
अविवाहित रहने वाली बुजुर्ग औरतें
एकल माताएं या
लापता पुरुषों की पत्नियां हैं।

माना जाता है कि वे औरतें जिनके पति रोजगार के लिए लंबे समय से दूसरी जगह रहते हैं और अपनी पत्नियों को घर की देखभाल करने के लिए अकेली छोड़ गए हैं, एकल नहीं हैं क्योंकि वे अभी तक पति के साथ रिश्ते में हैं, उनके पति कभी–कभार उनके पास आते हैं और वे उन्हें कुछ पैसे भी भेजते रहते हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार देश में इस समय 5 करोड़ एकल औरते हैं, जिनमें से ज्यादातर विधवा हैं। अन्य आंकड़ों के मुताबिक –

- एकल औरतों की संख्या भारत की कुल महिला आबादी का 8.6 प्रतिशत है।
- ज्यादातर औरतों के लिए एकल होना एक समस्या है। तलाकशुदा, छोड़ दिए गए या विधुर पुरुषों की संख्या समान परिस्थिति वाली महिलाओं की तुलना में बहुत कम है। ऐसे पुरुषों की संख्या जहां 1,38,92,420 है वहीं औरतों की संख्या 4,65,43,802 है।
- महिलाओं की आबादी में वृद्धि की दर 18.3 है जबकि एकल औरतों की आबादी में वृद्धि की दर 29.6 है। पिछले 10 सालों के दौरान बुजुर्ग विधवा महिलाओं और 35 वर्ष से अधिक उम्र की अविवाहित औरतों की संख्या में लगातार हो रही वृद्धि सामाजिक और जनसांख्यिकीय, दोनों तरह के बदलावों का संकेत देती है।
- 35 वर्ष से अधिक उम्र की अविवाहित महिलाओं की संख्या में करीब 66 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई है। ये दर्शाता है कि देश में ऐसी महिलाओं की संख्या बढ़ी है जो या तो विवाह न करने का फैसला लेती हैं अथवा देर से विवाह करती हैं।
- एकल महिलाओं का जो आंकड़ा आधिकारिक तौर पर सामने आता है, वह सच्चाई को नहीं बता पाता क्योंकि हमें ऐसा लगता है कि एकल महिलाओं की संख्या और अधिक होनी चाहिए। सामाजिक बाध्यताओं तथा मान्यताओं के कारण कई परिवार जनगणना के दौरान तलाकशुदा या परित्यक्ता महिलाओं की जानकारी नहीं देते हैं।

'अलग रह रही महिलाओं' पर फोकस

इस पत्र में अलग रह रहीं औरतों पर विधवाओं से ज्यादा ध्यान केन्द्रित किया गया है। चाहे वे विधवा औरतें हों या अन्य एकल महिलाएं, नीति निर्माण के समय किसी पर भी ध्यान नहीं दिया जाता है, फिर भी अलग रह रहीं औरतें उन सबमें ज्यादा 'अदृश्य' जीवन जीती हैं। इस पत्र में इस श्रेणी की एकल औरतों को केन्द्र में रखा जा रहा है ताकि किसी प्रकार उन्हें भी 'दृश्य' बनाया जा सके और विधवाओं के समान उनकी समस्याओं को भी सामने लाया जा सके।

कीर्ति सिंह का अध्ययन

दिल्ली की जानी–मानी अधिवक्ता कीर्ति सिंह ने अक्टूबर 2008 से सितंबर 2009 तक तलाकशुदा और अलग रह रहीं महिलाओं के कानूनी अधिकारों को लेकर एक अध्ययन किया था जिसमें पूरे देश से 405 औरतों को शामिल किया गया था। ज्यादातर मध्यवर्गीय और निम्न मध्यवर्गीय औरतों पर किए गए अध्ययन में उन्होंने पाया कि तलाकशुदा और पति से अलग रह रही महिलाओं की संख्या बढ़ रही है लेकिन वे किस स्थिति में और किसके साथ रह रही हैं इस पर अधिक ध्यान नहीं दिया जा रहा है। उनका अध्ययन कहता है कि 75 प्रतिशत ऐसी औरतों को अपने मां–बाप के साथ रहना पड़ रहा है क्योंकि उनके पास आमदनी का कोई जरिया नहीं है। 80 प्रतिशत के साथ उनके बच्चे रहते हैं। केवल 1.7 प्रतिशत औरतें ही 35 हजार प्रतिमाह तक का अच्छा वेतन पाती हैं। 80 प्रतिशत से अधिक औरतें महीने में 4 हजार रुपये से भी कम कमा पाती हैं और वे गरीबी रेखा से नीचे जीवन निर्बाह करती हैं। सर्वे में जो एक और हैरत वाली बात पता चली वो ये थी कि सर्वे में शामिल करीब आधी महिलाओं ने कभी हरजाने की मांग नहीं की। कानूनी कार्रवाई न करने के पीछे संसाधनों का अभाव और जानकारी न होना जैसे कारण शामिल थे। सबसे चौंका देने वाली बात ये थी कि करीब 83 प्रतिशत औरतों ने कहा कि पति से अलग होने वाले कारणों में ससुराल में होने वाली क्रूरता और घरेलू हिंसा शामिल थे।

जिस सेमिनार में कीर्ति सिंह ने अपने अध्ययन के नतीजों को साझा किया, वहां एकल औरतों से संबंधित कुछ और तथ्य सामने रखे गए –

- ज्यादातर एकल औरतें अपनी आर्थिक आवश्यकताओं के लिए मां–बाप पर निर्भर रहती हैं।
- 41 प्रतिशत एकल औरतों के पास आय का कोई जरिया नहीं होता। 27 प्रतिशत औरतें महीने में दो हजार से भी कम कमा पाती हैं। घर से बाहर जाकर काम करने के मामले में भी देश के अलग–अलग हिस्सों में भिन्नता पाई गई। जैसे कि दक्षिण भारत में 66 प्रतिशत तो उत्तर में 42 प्रतिशत एकल औरतें ही घर से बाहर जाकर काम कर पाती हैं।
- बहुत कम महिलाएं ही तलाकशुदा थीं। वे तलाक नहीं लेना चाहती थीं क्योंकि उन्हें लगता है कि ऐसा करने से सामाजिक और आर्थिक रूप से वे कमजोर हो जाएंगी।
- शादी टूटने के कारणों में मानसिक और शारीरिक क्रूरता शामिल थे। महिलाएं बुरी शादी को तब तक नहीं छोड़ना चाहती हैं जब तक कि उनके साथ होने वाली हिंसा हद को पार नहीं कर जाती है। उनका कहना है कि शादी टूट जाने के बाद उनके पास न तो जीने के लिए पैसे होते हैं और न ही सुरक्षा। सरकार भी उनके लिए कोई व्यवस्था नहीं करती है।
- 85 प्रतिशत मामलों में बच्चों के पालन–पोषण की जिम्मेदारी एकल मांओं पर होती है। केवल 7.9 प्रतिशत बच्चे ही अपने पिता के पास रहते हैं। अध्ययन में शामिल 25 प्रतिशत से अधिक महिलाओं के बच्चे नहीं थे और उन्हें छोड़ देने के मुख्य कारणों में यह भी एक कारण था।
- 85.7 प्रतिशत मामलों में शादियां दोनों पक्षों की सहमति से अरेंज तरीके से हुई थी। इससे पता लगता है कि शादियों के टूटने में प्रेम विवाह कोई बड़ा कारण नहीं होता।
- 17 प्रतिशत एकल महिलाएं अशिक्षित थीं।

विभिन्न धर्मों में तलाक और अलग रहने के मामले

इस खंड में दी गई जानकारी 14 मई 2017 को टाइम्स ऑफ इंडिया में प्रकाशित सुबोध वर्मा के आलेख 'सेपरेशन मोर कॉमन दैन डिवोर्स इन ऑल रिलीजन्स, सेन्सस डाटा रिवील्स' से ली गई है।

- मुसलमानों में अलग रह रहीं औरतों की संख्या प्रति एक हजार विवाहित औरतों में 6.7 प्रतिशत है। यह संख्या हिंदू औरतों से कम है जो कि 6.9 प्रतिशत है जबकि ईसाई और बौद्ध औरतों से करीब–करीब आधी है। अलग रह रही और विधवा महिलाओं की संयुक्त संख्या मुसलमानों में प्रति एक हजार में 11.7 प्रतिशत जबकि हिंदुओं में 9.1 प्रतिशत है। ईसाई और बौद्धों में ऐसी संयुक्त एकल औरतों की संख्या क्रमशः 16.6 और 17.6 प्रतिशत है जो हिंदू और मुस्लिम औरतों से दुगुना है।
- 2001 से 2011 तक की जनगणना के दौरान बौद्ध समुदाय में अलग रह रही और तलाकशुदा औरतों की संख्या में 34 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई है जबकि हिंदुओं में 40 और मुसलमानों में 39 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई है। सबसे अत्यधिक बढ़ोतरी सिख समुदाय में 108 प्रतिशत की देखी गई। इनमें शादी टूटने का सबसे बड़ा कारण सिख पुरुषों का कमाई के लिए विदेश चला जाना है।
- अपने आलेख में लेखक ने कहा है कि सभी समुदायों में एकल औरतों के लिए सरकारी सुरक्षा और कानून बनाए जाने की जरूरत है ताकि उन्हें पति से आर्थिक मदद प्राप्त होती रहे। विधवाओं की तरह तलाकशुदा या अलग रह रही औरतों को जमीन का अधिकार भी प्राप्त नहीं होता है।

महाराष्ट्र के पुणे और सांगली जिलों में परित्यक्ता महिलाओं पर 2010 में सीमा कुलकर्णी ने एक अध्ययन किया था जिसे 'अंडरस्टैंडिंग द सोशियो–इकोनोमिक नेचर ऑफ डिजर्सनः फाइंडिंग फ्रॉम ए स्टडी डन इन पुणे एंड सांगली' नाम दिया गया था। सीमा सोसायटी फॉर प्रोमोटिंग पार्टिसिपेटिव इकोसिस्टम मैनेजमेंट (SOPPECOM) से संबद्ध हैं। अध्ययन में उन्होंने पाया कि ज्यादातर परित्यक्ता औरतों ने कानूनी तौर पर तलाक नहीं लिया था। उनके बताए गए कारणों में दो मुख्य थे :

- कानूनी प्रक्रिया बहुत जटिल और महंगी है जिसमें वकीलों और एजेंटों को काफी पैसे देने पड़ते हैं।
- वे पति के पास वापस लौट जाने की उम्मीद रखती हैं तथा साथ ही परित्यक्त होने को तलाक लेने की तुलना में सामाजिक रूप से कम अपमानजनक मानती हैं।

अध्ययन में यह भी पाया गया कि शादी से अलग होने का फैसला शादी के 4 से 5 साल के भीतर ही लिया जाता है।

क्या करें?

अंत में, राजस्थान में एसोसिएशन ऑफ स्ट्रांग वीमेन अलोन द्वारा कराए गए एक कन्वेंशन में अलग रह रहीं निम्न आय वाली औरतों और तलाकशुदा महिलाओं की ओर से जो सुझाव आए, उनमें से कुछ इस प्रकार हैं:

- सरकार की ओर से विधवा औरतों के लिए जो सुविधाएं प्रदान की गई हैं, वे सभी अलग रह रही औरतों को भी दी जाएं।
- सरकार को परंपरागत तलाक पत्रों को भी मान्यता देनी चाहिए जिसमें पति और पत्नी के पिता शादी के टूटने की बात को लिख देते हैं। अकसर वे स्टांप पेपर पर ऐसा लिखते हैं या फिर जाति पंचायत उनकी ओर से ऐसा करती है।
- राजस्थान सरकार की ओर से तलाकशुदा और अलग रह रही औरतों को दी जाने वाली सुविधाओं को प्राप्त करने के लिए पति से अलग रहने की समय सीमा को 5 साल से घटाकर 3 साल किया जाना चाहिए।
- गांवों में ग्राम पंचायत तथा शहरों में नगर निगम के अधिकारी अथवा वार्ड वार्षद महिला के पारंपरिक तरीके से तलाकशुदा होने या पति से अलग रहने की बात को प्रमाणित कर सकते हैं। उस प्रमाणपत्र को सरकार से सुविधा प्राप्त करने में इस्तेमाल किया जा सकता है।
- पति से अलग रह रही औरत अगर अपने घर की मुखिया है तो उसके नाम से अलग राशन कार्ड निर्गत किया जाना चाहिए। यदि उसके साथ उसके बच्चे, भाई या परिवार के अन्य सदस्य भी रहते हैं तो भी वह अपने घर की मुखिया मानी जाएगी।
- एकल औरतों की मदद करने वाली संस्थाओं को सरकार की ओर से सहायता प्राप्त होनी चाहिए। जब तक एकल औरतें संगठित नहीं होंगी तब तक उन्हें उनके अधिकारों तथा कानूनों के प्रति जागरूक नहीं किया जा सकता है।

निष्कर्ष

इस पत्र में कानूनी एवं पारंपरिक रूप से तलाकशुदा औरतों तथा पति से अलग रह रही महिलाओं के बारे में सीमित मगर संतुलित तथ्यों को प्रस्तुत करने की कोशिश की गई है। लगभग सभी अध्ययनों में पाया गया कि घरेलू हिंसा तथा शारीरिक एवं मानसिक प्रताड़ना शादी टूटने के मुख्य कारण हैं। लंबे समय तक ऐसी औरतों की परेशानी समाज में किसी को दिखाई नहीं दी। लेकिन अब समय आ गया है जब हमें इसे देखना चाहिए और इसे दूर करने की दिशा में प्रयास भी करना चाहिए।

EQUAL?
EQUAL?

कमला भसीन

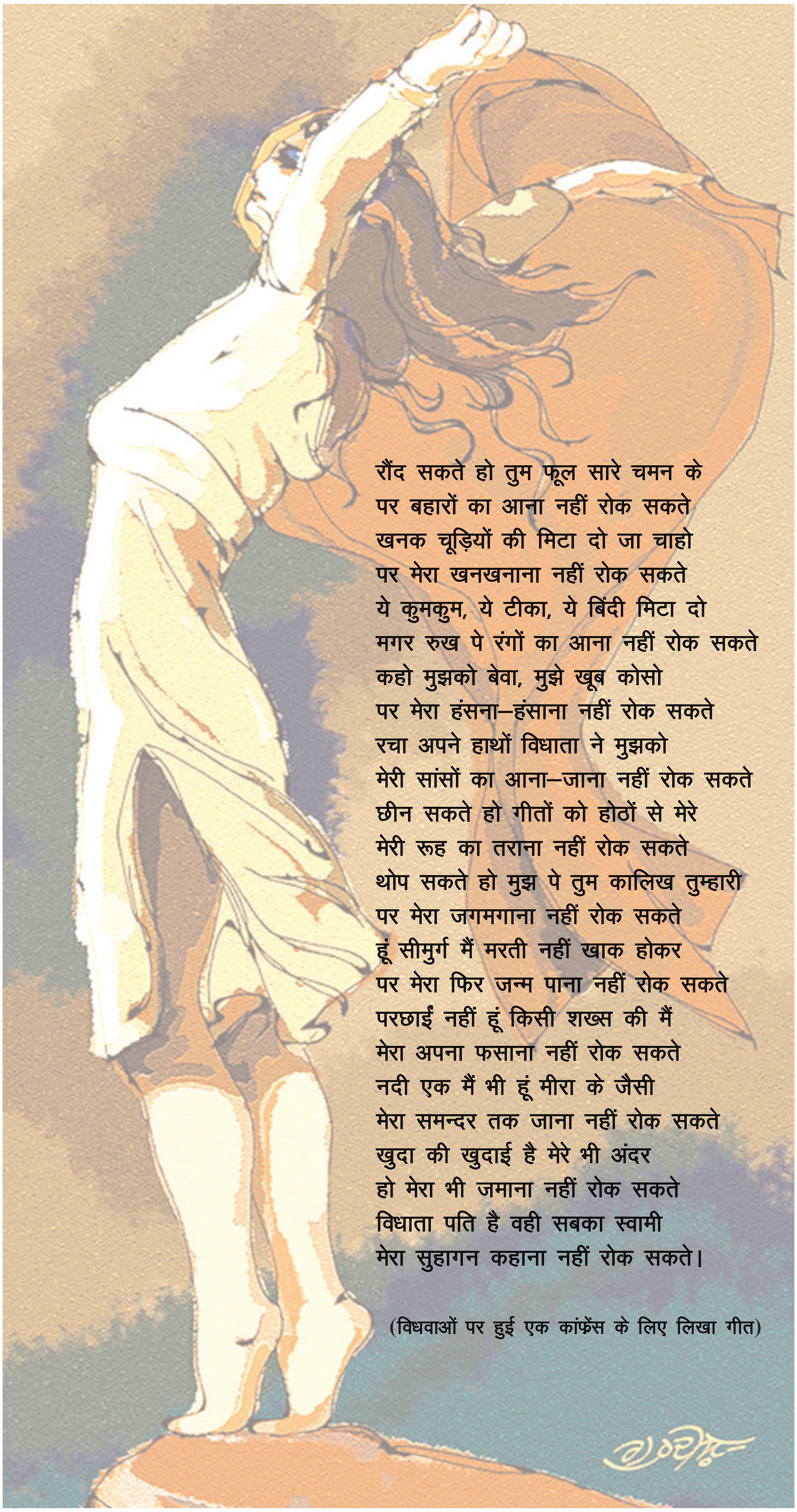

रौंद सकते हो तुम फूल सारे चमन के
पर बहारों का आना नहीं रोक सकते
खनक चूड़ियों की मिटा दो जा चाहो
पर मेरा खनखनाना नहीं रोक सकते
ये कुमकुम, ये टीका, ये बिंदी मिटा दो
मगर रुख पे रंगों का आना नहीं रोक सकते
कहो मुझको बेवा, मुझे खूब कोसो
पर मेरा हंसना–हंसाना नहीं रोक सकते
रचा अपने हाथों विधाता ने मुझको
मेरी सांसों का आना–जाना नहीं रोक सकते
छीन सकते हो गीतों को होठों से मेरे
मेरी रूह का तराना नहीं रोक सकते
थोप सकते हो मुझ पे तुम कालिख तुम्हारी
पर मेरा जगमगाना नहीं रोक सकते
हूं सीमुर्ग मैं मरती नहीं खाक होकर
पर मेरा फिर जन्म पाना नहीं रोक सकते
परछाईं नहीं हूं किसी शख्स की मैं
मेरा अपना फसाना नहीं रोक सकते
नदी एक मैं भी हूं मीरा के जैसी
मेरा समन्दर तक जाना नहीं रोक सकते
खुदा की खुदाई है मेरे भी अंदर
हो मेरा भी जमाना नहीं रोक सकते
विधाता पति है वही सबका स्वामी
मेरा सुहागन कहाना नहीं रोक सकते।

(विधवाओं पर हुई एक कांफ्रेंस के लिए लिखा गीत)

औरत के आजाद मन को बखूबी दर्शाती यह तस्वीर भारतीय कलाकार गुरदीश पन्नू की है जिसे hiveminer.com से लिया गया है।

अनुक्रमणिका

संकल्पना

हमारी बात : संपादकीय

अतिथि संपादक : एकल औरतें : तथ्य और आंकड़े
–डॉ. गिन्नी श्रीवास्तव

वजूद : जारी है सहअस्तित्व का संघर्ष 3.

चुनौतियां : एकल हैं अजीब नहीं 5.

विचार मंच : पति के ना होने पर नारी एकल! क्यों? 7.
– कमला भसीन

सोच का फर्क : ...मगर सामाजिक मान्यता नहीं 10.
– ई. के. ट्रिम्बरगर

आइना : 'पहचान' एकल महिलाओं की 12.
– जयिता मुखोपाध्याय

हक : सहानुभूति नहीं, समान अधिकार चाहिए 14.

हालात : आंकड़ों में एकल महिलाएं 16.

अधिकार : जमीन– जितनी तुम्हारी, उतनी हमारी 17.

विमर्श : क्या हैं एकल अभिभावक परिवार 19.
–डॉ. शालिनी भारत

कहानी : गाथा एकल महिलाओं की 21.

श्रोत

www.shodhganga.inflibnet.ac.in
www.yourarticlelibrary.com
www.google.com
www.hindustantimes.com
www.timesofindia.com
SINGLE, YES… BUT NOT ALONE
Ekal Nari Shakti Manch
Are We Forgotten Women?
National Forum for Single Women's Rights
Thomson Reuters Foundation
Census of India
www.unmarried.org
www.naari.com
Land Rights of Single Women : ActionAid

Images from

www.google.com
https://in.pinterest.com

जारी है सहअस्तित्व का संघर्ष

वैदिक काल से लेकर आज तक अपने वजूद के लिए लड़ रही हैं एकल महिलाएं

''समाज जानकर, अनजान है; देखकर, अनदेखा कर देता है। वो लाखों करोड़ों ऐसी महिलाएं जो विधवा हो गई हैं, जो घर से निकाली, छोड़ी, परित्यागी जा चुकी हैं, जो तलाकशुदा हैं, जिन्होंने कभी शादी नहीं की – समाज जानता है कि हम यहां हैं, और इससे ज़्यादा शायद जानना चाहता नहीं। हम कौन हैं, कैसे ज़िंदगी बसर कर रही हैं, कैसे ज़िंदा हैं?'' राष्ट्रीय एकल नारी अधिकार मंच की एकल सदस्यों ने जब अपने बारे में अध्ययन करना शुरू किया तो उनके पहले उद्गार यही थे। **2012 में 'हमारी उपेक्षा कब तक'** शीर्षक से प्रकाशित इस अध्ययन रिपोर्ट में भारत में निम्न आय समूह की एकल महिलाओं की स्थिति पर विस्तृत शोध प्रस्तुत किया गया। गौर से देखें तो यह देश के छह राज्यों की एकल महिलाओं की दशा को उजागर करने वाली शोध रिपोर्ट है। इसके मुताबिक भारत में एकल महिलाओं की परिभाषा में हम निम्न महिलाओं को शामिल कर सकते हैं।

- विधवा महिलाएं
- तलाकशुदा महिलाएंः वे महिलाएं जिनके पास तलाक के कानूनी दस्तावेज़ हैं, और वे मुस्लिम महिलाएं जिन्हें मुस्लिम पर्सनल लॉ के तहत तलाक दिया गया है। उनके पास अक्सर तलाक से संबंधित कागज़ नहीं होते हैं।
- परित्यक्ता महिलाएंः वे महिलाएं जो अपने पति से अलग रह रही हैं, जिन्हें 'छोड़' दिया गया है, 'निकाल' दिया गया है, या जो खुद शादी के बंधन को तोड़ चुकी हैं। इनमें से बहुत सी महिलाएं कह सकती हैं कि उनकी शादी अब खत्म हो चुकी है; कुछ ऐसी भी हैं, जो अभी ऐसा नहीं कह सकती।
- वे महिलाएं जिनके पति लापता हैं, लेकिन उनकी कोई खबर मिले अभी सात साल पूरे नहीं हुये हैं।
- साथ ही कुछ ऐसी महिलाएं भी जिनके पास समुदाय के बुजुर्गों द्वारा दिया गया कोई कागज़ है, जिसके मुताबिक शादी का ख़त्म होना माना गया है, वह भी परित्यक्ता महिलाओं में ही गिनी गई हैं।
- अविवाहित महिलाएंः जो उम्रदराज़ हैं। भारतीय संस्कृति में सामान्यतः 35 वर्ष के लगभग आयु होने तक यदि कोई महिला अविवाहित है, तो कोई विशेष परिस्थिति इसकी ज़िम्मेदार है (दहेज, पारिवारिक ज़िम्मेदारी, विकलांगता या कोई रोग, कोई टूटा हुआ रिश्ता या कुछ और)। आज भी ऐसी महिलाओं की संख्या अधिक नहीं है, जो शादी न करने का निर्णय लेती हैं, किन्तु यह संख्या आज बढ़ रही है।

वैदिक काल से अब तक

वैदिक काल में भारत में एकल महिलाओं की स्थिति के बारे में जानने की कोशिश करें तो पाएंगे कि उस समय औरतों को इतनी बंदिशों का सामना करना नहीं पड़ता था। न तो बेटियों का पैदा होना अभिशाप था और न ही उसकी मौजूदगी मां–बाप के लिए जिंदगी भर का बोझ। 'शोधगंगा' के अध्ययन बताते हैं कि ईसा पूर्व चौथी सदी में स्त्रियों की स्थिति कहीं अच्छी थी। 1700 से 500 ईसा पूर्व को महिलाओं के लिए 'स्वर्ण युग' कहा जाता है। औरतों को अपनी पसंद का वर चुनने की कुछ हद तक आजादी थी और पसंदीदा वर न मिलने की स्थिति में अविवाहित रहने का अधिकार भी प्राप्त था। 300 ईसा पूर्व के बाद से हिंदू समाज में स्त्रियों को कमजोर करने और विभिन्न परंपराओं तथा नियमों के जरिये उन्हें हाशिये पर धकेलने की कोशिश की जाने लगी। विवाह को महिलाओं के अस्तित्व के लिए अनिवार्य बना दिया गया और उन्हें पुरुषों के अधीन माना जाने लगा। यहां तक कि यदि किसी अविवाहित युवती की मृत्यु हो जाती तो उसके शव का विवाह कराने के बाद ही अंतिम संस्कार किया जाता था। ये माना जाता था कि कुंवारी लड़की को आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता है।

मध्ययुग में दहेज प्रथा अस्तित्व में आई। मां–बाप को बेटियों के विवाह के लिए वरपक्ष को वस्तु या धन के रूप में कुछ न कुछ देना पड़ता था। जिनके पास दहेज में देने के लिए धन या कीमती वस्तुएं नहीं होती थीं उनके घरों में लड़कियां बिन ब्याही रह जाती थीं। समाज ऐसी लड़कियों को हेय दृष्टि से देखता था। यहां से औरतों की स्थिति में तेजी से गिरावट देखी जाने लगी।

अब लड़कियों को आर्थिक बोझ के तौर पर देखा जाने लगा और उनके जन्म पर दुःख मनाया जाने लगा। तब से लेकर आज तक महिलाओं की कमोबेश यही स्थिति है। हालांकि अब इसमें बदलाव आने लगा है।

परिवर्तन और रुढ़िवादिता साथ–साथ

स्वाधीनता आंदोलन के समय कई महिलाओं ने समाज सेवा का प्रण लेकर विवाह नहीं करने का फैसला लिया था। लेकिन 1974 में महिलाओं की स्थिति को लेकर गठित राष्ट्रीय समिति ने पाया कि महिलाएं अब नई जीवनशैली और सोच को अपनाने लगी हैं। स्वतंत्र भारत में कई औरतों ने अविवाहित रहने का फैसला अपनी निजी आजादी और व्यक्तित्व विकास को ध्यान में रखकर लिया। वे शिक्षित व आत्मनिर्भर हैं और आर्थिक व सामाजिक स्वच्छंदता के साथ जी रही हैं। मेरठ विश्वविद्यालय में भारत में एकल महिलाओं पर वर्ष 2009 में किए गए एक शोध **'सिंगल वीमेनः प्रॉब्लम्स एंड चैलेंजेस'** में शोधकर्ता ने विभिन्न विद्वानों का हवाला देते हुए बताया है कि अभी भी भारत में एकल महिलाओं को पर्याप्त स्वीकृति नहीं मिल पाई है। प्रोमिला कपूर (1977) और मृणाल पांडे (1977) का मानना है कि भारत में एकल महिलाएं डर और असुरक्षा के साये में जीती हैं और उन्हें समाज के दोहरे मापदंड का शिकार बनना पड़ता है। उनके मुताबिक समाज महिलाओं को मां और पत्नी के रूप में ही स्वीकार करता है और उनका बिना विवाह के रह जाना उन्हें स्वीकार्य नहीं होता। भारत में अभी भी एकल महिलाओं को असफल, विचित्र, छोड़ दी गई या सेक्स में असफल माना जाता है।

भारत में ये एक आम धारणा है कि एकल व्यक्ति या जिन्होंने विवाह नहीं किया हो, वे परिवार की अतिरिक्त जिम्मेदारी होते हैं। कुछ हद तक यह सही भी है। ऐसी स्थिति में अविवाहित रहने वाले पुरुष अविवाहित महिलाओं की तुलना में अधिक स्वीकार्य होते हैं क्योंकि वे धन उपार्जित कर परिवार की सहायता करते हैं जबकि महिलाओं के मामले में ऐसा नहीं हो पाता है और वे बोझ समझ ली जाती हैं। उन्हें अतिमहत्वाकांक्षी और समझौता नहीं करने वाली माना जाता है और इसलिए समाज में सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता है। ब्लूमबर्ग और ड्वारकी (1980) के मुताबिक, अविवाहित महिलाएं तीन कारणों से खुश नहीं रह सकतीं–असुरक्षा और जीने का प्रबंध न कर पाना, जैविक रूप से साथी की जरूरत तथा सामाजिक दबाव एवं आलोचना। हालांकि 21वीं सदी में महिलाओं पर सामाजिक दबाव कम हुए हैं और वे आत्मनिर्भर होने लगी हैं। भारतीय समाज बड़े स्तर पर बदलाव का साक्षी बन रहा है। महिलाएं घर से बाहर निकलकर काम कर रही हैं और न केवल अपने बल्कि पूरे परिवार के निर्वाह का दायित्व उठा रही हैं। अपनी मेहनत और कौशल से धन उपार्जित करना युवा लड़कियों के लिए जीवन की प्राथमिकता बन चुका है जबकि विवाह का स्थान पीछे छूट चुका है।

एक दशक में 39 प्रतिशत की वृद्धि

जनगणना 2011 इस बात को प्रमाणित करती है कि देश में एकल महिलाओं की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है। यह कहती है कि पिछले एक दशक में एकल महिलाओं की संख्या में 39 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई है। इन एकल महिलाओं में विधवाएं, तलाकशुदा, परित्यक्ता और अविवाहित महिलाएं शामिल हैं। 2001 की 51.2 मिलियन की तुलना में आज एकल महिलाओं की संख्या 71.4 मिलियन ते पहुंच चुकी है। जनगणना रिपोर्ट के मुताबिक, 25 से 29 वर्ष तक की आयुवर्ग की एकल महिलाओं की संख्या में सबसे ज्यादा 68 प्रतिशत तक की वृद्धि देखी गई है जबकि 20 से 24 वर्ष तक की एकल महिलाओं की संख्या 60 प्रतिशत तक बढ़ी है। एकल महिलाओं की संख्या में यह बढ़ोतरी विवाह को लेकर बदल रही धारणा को इंगित करती है। हालांकि अभी भी देश में एकल महिलाओं की श्रेणी में विधवाओं की संख्या अधिक है और ग्रामीण क्षेत्रों में यह करीब 29.2 मिलियन है जबकि अविवाहित स्त्रियों की संख्या वहां 13.2 मिलियन के करीब है। इसी तरह शहरी क्षेत्रों में विधवाओं की संख्या 13.2 मिलियन जबकि अविवाहित महिलाओं की संख्या करीब 12.3 मिलियन है।

रिपोर्ट बताती है कि देश के गांवों में करीब 44.4 मिलियन एकल महिलाएं हैं जो कि पूरे देश में मौजूद एकल महिलाओं का 62 प्रतिशत है। शहरी क्षेत्रों में गांवों की तुलना में एकल महिलाओं की संख्या कम है लेकिन यहां 2001 के मुकाबले इनकी संख्या में काफी इजाफा हुआ है और यह संख्या 17.1 मिलियन से बढ़कर 27 मिलियन तक पहुंच गई है। उत्तर प्रदेश में 12 मिलियन एकल महिलाएं हैं जो देश में सर्वाधिक संख्या है और इनमें से ज्यादातर ने कभी शादी नहीं की। 6.2 मिलियन के साथ महाराष्ट्र दूसरे नंबर पर जबकि आंध्र प्रदेश 4.7 मिलियन संख्या के साथ तीसरे नंबर पर है।

एकल हैं, अजीब नहीं!

एकल जीवन जीना न तो पुरुष और न ही स्त्री के लिए अब कोई अनोखी बात रह गई है। चीन और ब्राजील के साथ ही भारत भी अब उन देशों की कतार में है जहां शादी न करना ट्रेंड में है। टाइम पत्रिका ने अविवाहित रहने के ट्रेंड को सबसे अधिक परिवर्तनशील सोच माना है। शादी न करना और एकल जिंदगी जीना अब कोई सामाजिक टैबू नहीं है बल्कि पूरी दुनिया में तेजी से विकसित और स्वीकृत हो रही जीवनशैली है। इस विषय पर विस्तृत अध्ययन कर रहीं न्यूयार्क विश्वविद्यालय की प्रो. एरिक क्लीनेनबर्ग ने 2013 में टाइम्स ऑफ इंडिया के साथ एक बातचीत में बताया कि एकल रहना, अकेलापन महसूस करना, एकाकी रहना और सबसे दूर रहना, ये चार दशाएं हैं जिनके बीच हम अकसर उलझ कर रह जाते हैं। वे कहती हैं ''मेरे विचार में एकल वैसे लोग हैं जो न तो एकाकी होते हैं और न ही सबसे दूर। बल्कि वे तो दोस्तों और रिश्तेदारों के साथ दूसरों की तुलना में ज्यादा समय बिताते हैं।''

एकल वैसे लोग हैं जो न तो एकाकी होते हैं और न ही सबसे दूर। बल्कि वे तो दोस्तों और रिश्तेदारों के साथ दूसरों की तुलना में ज्यादा समय बिताते हैं।

सामाजिक रूप से कट जाना खतरनाक है मगर एकल होने का ये मतलब कतई नहीं है। वास्तव में एकल रहना तो और अधिक धन, संसाधन, सामाजिक सुरक्षा, सांस्कृतिक सहिष्णुता तथा स्त्रियों की आजादी की मांग करता है। तो फिर एकल लोग भला समाज से कटकर कैसे रह सकते हैं। उनकी जीवनशैली तो संसार के सबसे सभ्य और विकसित समाजों में सर्वव्यापक रूप से अपना स्थान बना रही है। एरिक मानती हैं कि जो लोग लंबे समय तक एकल रह गए हैं उन्हें बाद में किसी साथी के साथ रहने में समय तो लगता है लेकिन यह असंभव भी नहीं है।

ये ठीक है कि विभिन्न कारणों से लोग अब एकल रहना और शादी नहीं करना पसंद करने लगे हैं लेकिन यह उनके जीवन का एकमात्र उद्देश्य नहीं है। ज्यादातर लोग अभी भी जोड़े में रहना ही पसंद करते हैं लेकिन कई बार जीवन के किसी मोड़ पर या परिस्थितिवश वे अकेले रहने को चुन लेते हैं। इनमें भी पुरुषों की तुलना में महिलाओं के लिए यह फैसला अधिक चुनौतीपूर्ण हो जाता है। समय–समय पर विश्व के अलग–अलग हिस्सों में एकल महिलाओं पर कराए गए शोधों ने महिलाओं के शादी न करने के फैसले के पीछे जो कारण बताए हैं उनमें से कुछ इस प्रकार हैं–

स्वतंत्र रहने की इच्छा, अनुभव पाने की उन्मुक्तता, सेक्स के लिए हमेशा उपलब्ध रहना, नौकरी, दोस्ती बनाए रखना, परिवर्तन की इच्छा, इत्यादि।

चीन में 1981 में एकल महिलाओं पर हुए एक अध्ययन में पाया गया कि शादी न करने वाली स्त्रियों को लोग असामान्य, जीवन जीने के लिए अनुपयुक्त, विचलित, जिम्मेदारियों से बचने वाली, स्वच्छंद रहने की इच्छा रखने वाली, धनाढ्य, नशेड़ी और अजीब मानते हैं। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में पिछले दो दशकों से एकल महिलाओं पर काम कर रहीं बेला डीपॉलो ने 2014 की प्यू रिपोर्ट के हवाले से कहा है कि आज के समय में वयस्कों की आयुसीमा बढ़कर 50 वर्ष हो गई है जिनमें हर चार में से एक व्यक्ति अविवाहित हैं। यूएस न्यूज और वर्ल्ड रिपोर्ट ने अमेरिका में एकल रहने की बढ़ती प्रवृत्ति को लेकर चेतावनी भी दी है।

भारत की स्थिति अमेरिका और चीन जैसे देशों के मुकाबले भिन्न है। यहां एकल महिलाओं की श्रेणी में अपनी इच्छा से अविवाहित रहनेवाली महिलाओं की अपेक्षा उन महिलाओं की संख्या अधिक है जो या तो विधवा हैं या छोड़ दी गई हैं। तलाकशुदा स्त्रियों की संख्या अभी भी कम है। राष्ट्रीय

चित्र : एक्शनएड

एकल नारी अधिकार मंच की रिपोर्ट 'हमारी उपेक्षा कब तक' में देश के छह राज्यों में एकल महिलाओं की स्थिति को लेकर शोध किया गया। 2012 की इस रिपोर्ट के मुताबिक, बिहार में 18 वर्ष से अधिक विधवा महिलाओं की संख्या 18,76,012, तलाकशुदा और परित्यक्ता महिलाओं की संख्या 32,707 जबकि 30 वर्ष से अधिक की अविवाहित स्त्रियों की संख्या 90,153 है।

भारत की सामाजिक संरचना विधवाओं और परित्यक्ता महिलाओं को सम्मानजनक स्थान देने से कतराती है। ऐसी स्त्रियों को आदिकाल से ही अनगिनत बाध्यताओं और निषेधों का पालन करना पड़ रहा है। ऐसी महिलाओं के सामने आने वाली कुछ चुनौतियों को हम इस प्रकार देख सकते हैं–

- **एकाकीपन–** पति की मृत्यु या शादी के टूट जाने के बाद ससुराल पक्ष महिला की ज़िम्मेदारी नहीं लेना चाहता है; उसके भाई और माता–पिता सोचते हैं कि उनकी ज़िम्मेदारी शादी तक ही थी। ऐसी महिलाओं के लिये दूसरी शादी की संभावना भी कम होती है। हालांकि कम उम्र की निःसंतान विधवा महिलाओं के लिये स्थिति कुछ बदल रही है –लेकिन अब भी बहुत परिवर्तन नहीं आया है।
- **सामाजिक बहिष्कार–** उन्हें न तो परिवार चाहता है, न समाज। रूढ़िवादी प्रथाएं व सोच उन्हें अकेला और बहिष्कृत महसूस कराते हैं। अभी भी कई समुदायों में सुबह–सुबह विधवा का चेहरा देखना बुरा माना जाता है। विवाह विच्छेद को महिला की ही गलती माना जाता है, अगर पति किसी और महिला को घर ले आये, तो भी इसे पत्नी की कमी माना जाता है। एकल महिलाओं को चरित्रहीन समझा जाता है, जैसे वह पुरुषों को अपने जाल में 'फ़ंसाना' चाहती हों।
- **आर्थिक असुरक्षा–** देश में पढ़ी–लिखी आत्मनिर्भर महिलाओं की संख्या बढ़ जरूर रही है लेकिन अभी भी उन महिलाओं की संख्या अधिक है जो अशिक्षित हैं और अपनी जीविका के लिए दूसरों पर निर्भर हैं। छोटे शहरों और गांवों में बसने वाली ऐसी औरतों के लिए सबकुछ तब और मुश्किल हो जाता है जब वे एकल होती हैं। हमारे देश में कानूनी प्रावधानों के बाद भी महिलाओं को संपत्ति में अधिकार नहीं मिल पाता है और विधवा, परित्यक्ता या तलाकशुदा औरतों के लिए तो संपत्ति पाना असंभव–सा हो जाता है।
- **सुरक्षा–** जिन शहरों या गांवों में अभी भी संयुक्त परिवार की प्रथा विद्यमान है, वहां एकल महिलाओं की सुरक्षा का इंतजाम हो जाता है लेकिन अकेले रहने वाली या बड़े शहरों में अकले रहकर नौकरी और यात्रा कर रही एकल औरतों के लिए सुरक्षा बहुत बड़ा प्रश्न है। घृणित सामाजिक सोच वाले लोग एकल महिलाओं को सेक्स के लिए आसानी से उपलब्ध वस्तु समझते हैं और उनपर गिद्धदृष्टि रखते हैं। इसके अलावा उन्हें ऐसी महिला समझा जाता है जिनमें कोई 'खोट' है और इसलिए उन्हें हेय समझा जाता है।
- **योजनाओं की जटिल प्रकिया–** केंद्र व राज्य सरकार द्वारा संचालित की जाने वाली कल्याणकारी योजनओं की आवेदन प्रक्रिया लंबी व जटिल होती है। निम्न आय वर्ग की एकल महिलाओं को इसके बारे में जानकारी भी आसानी से नहीं मिल पाती है। आवेदन पत्र कहां से मिलेगा, उसको भरना, साथ में लगने वाले दस्तावेज़ – आय का प्रमाण, उम्र का प्रमाण, एकल होने का प्रमाण, राशन कार्ड की प्रतिलिपि, फोटो आदि। यह सब महिलाओं के लिये जुटा पाना आसान नहीं होता। आवेदन पूरा करके देने के पश्चात अनुगमन करना कि आवेदन का क्या हुआ और भी मुश्किल होता है।
- **सरकारी सहायता न होना–** स्वतंत्रता के 60 वर्ष से अधिक बीतने के बाद भी परित्यक्ता व तलाकशुदा महिलाओं को सरकार की ओर से कोई विशेष मदद नहीं दी जा रही है। शायद यह समझा जाता है कि, गुज़ारे भत्ते से संबंधित कानून व मुस्लिम पर्सनल लॉ में मेहर ही परित्यक्ता महिला व उसके बच्चों के लिये पर्याप्त है। यह सभी आयवर्गों के लिये सच है, कि आमतौर से पति परित्यक्ता महिला और बच्चों की ज़िम्मेदारी नहीं उठाना चाहते, और कचहरी से भरण–पोषण का आदेश होने पर भी पैसे नहीं देते हैं। परित्यक्ता महिलाओं के सामने समस्या यह है कि, उनके पास पति से अलग होने के सरकार द्वारा मान्य कोई कागज़ नहीं होते हैं। कुछ महिलाओं के पास 'सामुदायिक तलाक' के कागज़ होते हैं, जिन्हें सरकार द्वारा मान्यता नहीं है।

राष्ट्रीय एकल नारी अधिकार मंच की रिपोर्ट में विधवा महिलाओं को प्रताड़ित करने के तीन मुख्य कारण बताए गए– शक्ति, ज़मीन–जायदाद और लैंगिकता। मध्यम आय वर्ग की विधवा महिलाओं के उत्पीड़न के पीछे संपत्ति हड़पना, निम्न आय वर्ग की महिलाओं को यौन संबंध बनाने के लिये उत्पीड़ित करना और दोनों ही वर्गों की विधवा महिलाओं के लिये प्राधिकार या सत्ता उत्पीड़न के कारण हैं।

अविवाहित लड़कियों के मोबाइल इस्तेमाल पर बैन!

फरवरी, 2016 में गुजरात के मेहसाणा जिले के एक गांव की पंचायत ने बैठक कर अविवाहित लड़कियों और युवतियों के मोबाइल फोन इस्तेमाल करने पर रोक लगा दी। पंचायत की दलील है कि मोबाइल की लत के कारण समाज में माहौल खराब हो रहा है। बच्चियों की पढ़ाई बाधित हो रही है जबकि अविवाहित युवतियां घर के कामों में मन नहीं लगाती है। पंचायत ने मोबाइल को शराब की लत के समान ही खराब माना है लेकिन आश्चर्यजनक रूप से समान उम्र के लड़कों पर कोई प्रतिबंध नहीं लगाया गया है। पंचायत को किशोर और नौजवान लड़कों के मोबाइल फोन का इस्तेमाल करने में कोई बुराई नजर नहीं आती। पंचायत के इस अजीबोगरीब फैसले को लोगों की रुढ़िवादी सोच से जोड़ कर देखा जा रहा है।

पति के ना होने पर नारी एकल!क्यों?

हमारे पुरुषों को अपनी वैवाहिक स्थिति की सूचना देने की जरूरत नहीं है। उनके शरीर पर शादी के कोई निशान नहीं होते, न सिन्दूर, न चूड़ियाँ, न मंगलसूत्र, न चमकीले कपड़े। पुरुष शादी से परिभाषित नहीं होते। उनके लिए शादी जीवन का सिर्फ एक पहलू है। औरतों के लिए शादी ही सब कुछ है। शादी के बगैर औरत का गुजारा नहीं है।

(यह लेख असल में मेरा अपने साथ सम्वाद है। मैं खुद को यह सब कह रही हूँ, खुद से सवाल पूछ रही हूँ और अपने विचारों को सुलझाने की कोशिश कर रही हूँ। मुझे खुशी है कि मंजरी के जरिये आप भी मेरी इस बातचीत में शामिल हो रहे हैं और इस सवाल जवाब की महफिल का हिस्सा बन रहे हैं। स्वागत है।)

सच कहूँ तो मुझे कभी भी एकल नारी शब्द और इसकी आम परिभाषा पसंद नहीं आई। नारीवादी मजाकों की मेरी किताब जिसका नाम है, "हँसना तो संघर्षों में भी जरूरी है" और जिसे 'जागोरी' दिल्ली ने छापा है, हमने एक चित्र बनाया था जिसमें एक छोटी बेटी अपनी माँ को कह रही है, " माँ, जब हम दोनों इकट्ठे हैं तो तुम्हें लोग एकल औरत क्यों कहते हैं?"

मैं तलाकशुदा हूँ, इसलिए एकल नारी की परिभाषा के हिसाब से मैं एकल हूँ। मैं पूछती हूँ, क्यों हूँ एकल मैं? मेरा 36 साल का बेटा है जो मेरे साथ रहता है। वैसे मेरा बेटा पूरी तरह से विकलांग है, पर है तो मेरा बेटा और मेरे साथ है। और, खुशकिस्मती से मेरे तीन भाई और दो बहनें रही हैं जिनके दिल, बाँहें और घर मेरे लिए हमेशा खुले रहे हैं। उनकी मौजूदगी में मैं कभी न एकल हो सकती हूँ, न महसूस कर सकती हूँ। और फिर इतने सारे जिगरी दोस्त हैं जिन्दगी के सफर में और ये सब मेरी जिन्दगी के हमसफर शुरू से मेरे दुःख और सुख में साथ रहे हैं। शादी तो हम जैसों की आधी उमर बीत जाने पर होती है, तो जिससे हमारी शादी होती है वह कैसे हमारा जीवन साथी हो सकता है, और अकेला वही क्यों? है न सोचने वाली बात?

कमला भसीन

(जानी–मानी नारीवादी लेखिका, समाज सेविका और कवयित्री। आजीविका और जेंडर के मुद्दे पर 27 साल तक संयुक्त राष्ट्र से जुड़ी रहीं। स्वयंसेवी संगठन 'संगत' की सलाहकार व 'वन बिलियन राइजिंग' की दक्षिण एशिया कोर्डिनेटर)

एकल औरत की परिभाषा

मेरे ख्याल से, किसी पुरुष को हमारा समाज एकल नहीं कहता। यह विशेषण सिर्फ औरतों के लिए ही सुना है। तो कौन है एकल औरत? उम्र हो जाने पर भी जिसकी शादी नहीं होती या जो शादी नहीं करती। जिसका "पति" या तो गुजर गया है, या उसे छोड़ गया है या जिसके साथ तलाक हो गया है। यानि सिर्फ वो पुरुष जिसके साथ हमारे यौन सम्बन्ध हैं वही सब कुछ है। वह नहीं तो हम एकल। सिर्फ वही हमें एकलपन से बचाता है, केवल वही हमारा सुहाग है। सुहागन शब्द भी सिर्फ औरत के लिए है। हमारे समाज में पुरुष या तो सदा सुहागन हैं या उन्हें सुहाग की जरूरत नहीं है। पुरुषों का सुहाग होता नहीं है, इसलिए उनका सुहाग कभी लुटता नहीं है। पत्नी के गुजरने पर पतिओं पर आसमान नहीं टूटता। उनके जिस्म पर न कोई सुहाग का निशान होता है, न उसे बेरहमी से मिटाना पड़ता है। उन्हें पूरी उम्र सफेद कपड़ों में नहीं रहना पड़ता, न ही वृन्दावन जाकर उम्र गुजारनी पड़ती है।

औरत का एकलपन एक त्रासदी मानी जाती है

औरत के लिए एकल शब्द सिर्फ एक विवरण नहीं है। यह एक मूल्यांकन है। एकल है तो गड़बड़ है, वह घटिया है। विधवाओं का कितना बुरा हाल किया जाता है हम सब जानते हैं। कई बार तो उसे अपनी पति की मौत का जिम्मेदार माना जाता है, क्योंकि अगर वो सती सावित्री होती तो पति को मरने नहीं देती। विधवाओं को मनहूस माना जाता है। किसी नेक काम के दौरान उन्हें वहाँ मौजूद होने तक का हक नहीं है। जरा सोच कर देखिये कितना जालिम है हमारा समाज। कुछ भाषाओं में विधवा को रांड या रंडी कहते हैं और वेश्या के लिए भी यही शब्द इस्तेमाल होता है।

एकल औरतों को हमारे शहरों में किराए पर घर मिलना मुश्किल होता है। उन्हें लोग पार्टियों में नहीं बुलाते। डरते हैं कि एकल औरतें मर्दों को बहका कर उन पर काबू कर लेंगी। बड़ी उम्र की एकल औरत को हरेक को हमेशा बताना पड़ता है कि वो कब शादी कर रही है। एकल औरतों की शादी पूरे शहर की जिम्मेदारी बन जाती है।

औरतों के लिए शादी जरूरी

एकल औरत की स्थिति को समझने के लिए एक औरत की जिन्दगी में शादी को समझना बहुत जरूरी है। अगर औरत के लिए शादी जरूरी न हो तो वह कभी एकल न कहलवाए और न ही अकेले होने पर इतनी मुसीबतें झेले। तो अब जरा देखते हैं कि औरत के लिए शादी का मतलब क्या है।

समाज के लिए औरत की वैवाहिक स्थिति जानना बहुत जरूरी है

उसके पहनावे, चूड़ियों, सिन्दूर, मंगलसूत्र से दूर से ही पता लग जाना चाहिए कि औरत शादीशुदा है या नहीं। बहुत से पंजाबी समुदायों में

वधू को चूड़ा पहनाया जाता है। ये लाल और सफेद रंग की मोटी चूड़ियाँ होती हैं जो कलाई से लेकर कोहनी तक पहनी जाती हैं। कुछ औरतें इन्हें साल भर तक पहनती हैं। साल भर तक ये औरतें नवविवाहिता दिखाई देती हैं। पुरुष तो दो दिन बाद से ही सामान्य हो जाता है। ये सब निशानदेही औरतों पर ही क्यों? क्या ये सब इसलिए है कि सबको पता चल जाए कि यह सम्पत्ति अब बिक चुकी है। इस पर नजर न डाली जाए? सोचने का विषय है या नहीं?

यही नहीं औरत को बगैर देखे भी पता लगना चाहिए कि वह शादीशुदा है कि नहीं। इसलिए उसके नाम के सामने कुमारी या श्रीमती होता है। इंग्लिश में Mrs. या Ms. लगाना पड़ता है। जर्मन भाषा में और भी गजब है। अनब्याही महिला को कहते हैं raulein या छोटी औरत यानि बगैर "पति" के औरत छोटी ही रहती है। उसका बड़ा या पूर्ण होना "पति" पर निर्भर है। नारीवादी कोशिशों की वजह से अब इंग्लिश में Ms शब्द का इस्तेमाल होने लगा है. Mrs शब्द के जैसे Ms भी हर औरत के लिए इस्तेमाल होता है। उसकी वैवाहिक स्थिति जानने और बताने की कोई जरूरत नहीं है।

इसके ठीक उलट है मर्दों की कहानी। हमारे पुरुषों को अपनी वैवाहिक स्थिति की सूचना देने की जरूरत नहीं है। उनके शरीर पर शादी के कोई निशान नहीं होते, न सिन्दूर, न चूड़ियाँ, न मंगलसूत्र, न चमकीले कपड़े। नाम भी हमेशा श्रीमान, Mr या जर्मन में Herr. इस सबसे यही साबित होता है कि पुरुष शादी से परिभाषित नहीं होते। उनके लिए शादी जीवन का सिर्फ एक पहलू है। औरतों के लिए शादी ही सब कुछ है। शादी के बगैर औरत का गुजारा नहीं है।

हर औरत के लिए शादी क्यों है अनिवार्य?

क्या हर लड़की के लिए शादी इसलिए जरूरी नहीं है क्योंकि हमारे पितृसत्तात्मक परिवारों में जायदाद सिर्फ बेटों को दी जाती है? बेटियों को पराया धन समझा और कहा जाता है। इसका मतलब है हर बेटी को पैदा होते ही बता दिया जाता है कि उसके माँ–बाप का घर उसका नहीं है और उसके बड़े होते ही उसे माँ–बाप का घर, उनका नाम, उनकी परवाह करना, उनसे सहारे की उम्मीद करना छोड़ना पड़ेगा। किसके भरोसे वो बच्ची अपना सब कुछ छोड़ेगी? एक अनजाने इंसान और परिवार के लिए??? वाह, क्या गजब का प्यार है बेटियों के लिए इस देश में जहाँ बेटियों को देवी कहा जाता है। कहते देवी हैं, उससे पूरे घर के काम का बोझ उठवाते हैं और उसे बोझ समझते हैं। सिर्फ यही नहीं, बेटी को अच्छी शिक्षा देना और उसे अपने पैरों पर खड़ा होने लायक बनाने की भी जरूरत नहीं समझते। क्या ऐसे परिवारों में कोई भी बेटी सुरक्षित महसूस कर सकती है, अपने पैर जमा सकती है, सर उठा कर हिम्मत से जी सकती है? बेटियों के साथ ऐसा बर्ताव मेरी समझ के बाहर रहा है, सिर्फ अब से नहीं, बचपन से।

इन हालात और परम्पराओं के चलते, हर लड़की के लिए शादी जरूरी हो जाती है। अगर जीना है तो रोटी, कपड़ा और मकान चाहिए। माँ बाप, भाई ये सब देंगे नहीं, खुद वह बिना तैयारी के यह सब नहीं जुटा सकती। इसलिए अगर जीना है तो शादी करनी है।

ऊं स्वाहा

पितृसत्तात्मक शादी में औरतों की स्थिति

हमारे संविधान के अनुसार औरत और मर्द बराबर हैं, दोनों आजाद हैं ,दोनों के अधिकार हैं और दोनों की अस्मिता है। मगर हमारे परिवारों में अभी हमारा संविधान नहीं पहुँचा है। अधिकतर परिवारों में अभी भी मनु जी की सलाह ही मानी जा रही है, जिसके अनुसार हर औरत को हमेशा किसी मर्द के आधीन रहना चाहिए, बचपन में पिता के, शादी के बाद पति के और पति के गुजरने के बाद बेटों के अधीन। इसीलिए आज भी शादी में बेटियों का कन्यादान होता है। भारत की एक नागरिक को उसका पिता दान करता है एक और पुरुष को। उस दान के साथ ही उस नागरिक का मालिक बदल जाता है, पिता की जगह पति। उसका नाम बदल जाता है। पिता के नाम की जगह पति का नाम। उसका घर बदल जाता है, पिता के घर की जगह पति का घर और नए घर के कायदे–कानून और संस्कृति। बहुत से परिवारों में बहू को पर्दा करना पड़ता है, सबकी सेवा करनी पड़ती है, सबकी सुननी पड़ती है।

जिस व्यक्ति से औरत की शादी होती है उसे हम पति कहते हैं। पति का मतलब है स्वामी, मालिक, यानि, शादी में और हमारे परिवारों में समानता की न बात है न जगह। जो औरतें ऐसी शादियाँ करवाती हैं उन्हें ये सब पता होता है, या पता होना चाहिए। क्या ऐसी शादी में औरत की हालत बंधुआ मजदूर जैसी नहीं होती? उसी घर में गुजारा करना है चाहे हालात जैसे भी हों, क्योंकि कोई और चारा नहीं है। इन शादियों में औरतों पर हिंसा जिन्दगी का हिस्सा होती है। मालिकों का अपने दासों पर हाथ उठाना, उन पर हुकुम चलाना आम होता है। उसे गलत नहीं माना जाता। इसीलिए सरकारी आंकड़ों के अनुसार भारत में 40 प्रतिशत पत्नियों पर हिंसा होती है। हर तरह की हिंसा। आज भी बहुत सारे पुरुष और स्त्रियाँ भी इसे आम बात समझती हैं, जबकि कानून की नजर में यह अपराध या जुर्म है। अगर पति अच्छा है तो ठीक है, पर अगर वह अच्छा नहीं है तो सुहागनें बुझ सी जाती हैं। उनका अकेलापन बहुत दुखदाई होता है। नए परिवार में कोई राजदार नहीं, पुराने परिवार से कोई रिश्ता नहीं, सहेलियों के नाम पर कोई नहीं। ऐसे घरों में पत्नियां बेहद अकेली होती हैं, उनके अंदर एक गहरा अकेलापन होता है, मगर उन्हें एकल नहीं सुहागन कहा जाता है। इन्हीं हालात के बारे में मैंने एक गाना लिखा था,

> "कौन कहता है जन्नत इसे, हमसे पूछो जो घर में फँसे
> न हिफाजत न इज्जत मिली, कर–कर कुर्बानी हम मर गए
> हमने हर शय सँवारी मगर, खुद हम बदरंग होते गए
> दुश्मनों की जरूरत किसे, जुल्म अपनों ने हम पर किये
> घर के अन्दर भी गर मिटना है, तो सँभालो ये घर हम चले
> जिसमें दिन–रात औरत जले, ऐसे घर से हम बेघर भले।"

शादियों में समानता जरूरी है और मुमकिन भी

मेरी अब तक की लिखी बातें पढ़ कर शायद यूँ लगे कि मैं शादी के खिलाफ हूँ। ऐसा बिलकुल नहीं है। मैं गैर बराबरी वाली, अन्याय और हिंसा वाली शादी के खिलाफ हूँ। मैं उस शादी के खिलाफ हूँ जिसमें

परस्पर इज्जत और प्यार न हो। मैं उन शादियों के खिलाफ हूँ जिन की कड़वाहट, टकराव और हिंसा में बच्चे भी फँस जाते हैं और दुःख सहते हैं। गैर बराबर और हिंसात्मक शादियों का सबसे बड़ा नुकसान बच्चों को होता है और यह सरासर जुल्म है। मैं यह भी मानती और जानती हूँ कि स्त्री–पुरुष असमानता के खिलाफ उठी आवाजों और आंदोलनों की बदौलत हमारे परिवारों में बदलाव आये हैं और आ रहे हैं। समानता, न्याय और परस्पर सम्मान की ओर ले जाने वाले इन बदलावों की रफ़्तार को बढ़ाने की जरुरत है। मैं मानती ही नहीं जानती भी हूँ कि सुंदर, प्यार और सम्मान भरी शादियां हो सकती हैं और होती हैं। मैंने देखी हैं और उन्हें सराहा है।

मैं मानती हूँ कि औरत और मर्द दोनों के लिए शादी जरूरी नहीं होनी चाहिए। उनकी मर्जी है शादी करें या न करें। अगर करते हैं शादी तो जब तक प्यार है, सुख–चैन है, सम्मान है, साथ रहें। अगर शादी में सिर्फ बरबादी है, दुःख है, हिंसा है तो क्यों साथ रहें? सिर्फ रोटी, कपड़ा, मकान के लिए बंधे रहें, एक–दूसरे को दुःख देते रहें और दुःख सहते रहें? मुझे तो ऐसा करना जिन्दगी को नकारना, जिन्दगी का अपमान करना लगता है।

पूरी दुनिया में "एकल" औरतें सबसे गरीब हैं, मगर हमारे देश में गरीब होने के साथ–साथ उनका सामाजिक उत्पीड़न बहुत होता है औए यह सिर्फ हमारी मानसिकता के कारण। इसे कम किया जा सकता और कम करने के प्रयास इंसाफ पसंद लोगों ने हमेशा करने की कोशिश की है। विधवा पुनर्विवाह के लिए आवाज उठाई गई, सती प्रथा को रोका गया। इसी क्रम में आज भारत में "एकल" औरतों के सशक्तिकरण के लिए एक अभियान चल रहा है। एकल नारी शक्ति संगठन नामक सँजाल दस से अधिक राज्यों में यह काम कर रहा है। एक लाख से ज्यादा सदस्य हैं इनकी। "एकल" औरत से जुड़े रीति रिवाजों को बदला जा रहा है। विधवा महिलायें रंगीन कपड़े पहनने लगी हैं, चूड़ियाँ पहनने लगी हैं, बिंदी लगाने लगी हैं। "एकल" औरतों को उनके हक दिलवाए जा रहे हैं। नए कानूनों व योजनाओं की मांग की जा रही है। उनकी आर्थिक स्थिति सुधारने की कोशिश की जा रही है। संगठन की शक्ति से इन औरतों को उनके अधिकार दिलवाए जा रहे हैं, योजनाओं को लागू करवाया जा रहा है।

औरतों और लड़कियों को संपत्ति दिलवाने के लिए भी अभियान चल रहे हैं। सरकारी जमीन अगर किसी दंपत्ति को दी जा रही है तो पट्टा दोनों के नाम में देने की बात की जा रही है और दिया भी जा रहा है। मई 2017 में पूरे दक्षिण एशिया में एक अभियान शुरू किया गया जिसका नाम है Property for Her या संपत्ति औरत की भी। इस अभियान के पीछे यही सोच है कि अगर बेटी को जायदाद नहीं दी जायेगी, वह आत्मनिर्भर नहीं हो पाएगी और न ही हिंसा से बच पाएगी। आत्मनिर्भर बेटियाँ अपने माँ बाप का भी सहारा बन पाएंगी, अपने भाई बहनों की मदद कर पाएंगी।

अंत में मैं सिर्फ यही दोहराऊंगी कि "एकल" औरत की स्थिति बदलने के लिए जरूरी है औरत के लिए शादी के अर्थ पर पुनर्विचार करना, शादी को हर औरत की किस्मत न समझना, बेटियों को अपने पैरों पर खड़ा कर सकने वाली शिक्षा और परवरिश देना और संपत्ति में बराबर का हिस्सा देना।

सोच का फर्क

अमेरिका की तुलना में भारत में एकल महिलाओं को सांस्कृतिक स्वीकृति अधिक

......मगर सामाजिक मान्यता नहीं

ई. के. ट्रिम्बरगर

(समाजशास्त्री ई.के. ट्रिम्बरगर चर्चित पुस्तक 'द न्यू सिंगल वीमेन' की लेखिका हैं तथा वे सोनोमा विश्वविद्यालय में वीमेंस एंड जेंडर स्टडीज की प्रोफेसर हैं।)

जनवरी, 2008 में नई दिल्ली में हुए वीमेंस स्टडीज कांफ्रेंस के दौरान मुझे भारत में एकल महिलाओं के बारे में जानने का भरपूर मौका मिला। अमेरिका में एकाकी जीवन जीते हुए मुझे वहां की एकल महिलाओं की बाधाओं और सहूलियतों का तो पूरा अंदाजा था लेकिन भारत के मामले में यह अवसर मुझे इस कांफ्रेंस के दौरान ही मिला और तब मैंने दो बिल्कुल अलग समाज में रहने वाली मध्यमवर्गीय एकल औरतों के बारे में एक तुलनात्मक अध्ययन करने का निर्णय लिया।

भारत में वयस्क एकल महिलाओं की संख्या अमेरिका की तुलना में अत्यंत कम है। 25 से लेकर 59 वर्ष तक की 89.5 प्रतिशत औरतें यहां शादीशुदा हैं जबकि अमेरिका में इसी उम्र की ऐसी महिलाओं की संख्या 65 प्रतिशत है। सदा अविवाहित रहने वाली महिलाओं की संख्या अमेरिका में जहां 16 प्रतिशत है तो वहीं भारत में यह महज 2.5 प्रतिशत ही है। अमेरिका में तलाकशुदा औरतों की संख्या 17 प्रतिशत है जो कि भारत में 1 प्रतिशत है लेकिन भारत में विधवाओं की संख्या 7 प्रतिशत है जो कि अमेरिका के 2 प्रतिशत की तुलना में अधिक है (अमेरिकी जनगणना 2000 तथा भारतीय जनगणना 2001)। ऐसे में हममें से ज्यादातर अमेरिकी यह मान सकते हैं कि हम अधिक स्वीकृत हैं लेकिन मुझे लगता है कि यह सब इस बात पर निर्भर करता है कि सांस्कृतिक रूप से समाज हमें किस प्रकार देखता है और उससे भी अधिक कि हम स्वयं खुद को किस नजर से देखते हैं।

पहला, **अविवाहित औरतों के लिए हिंदी में अंग्रेजी के जितना नकारात्मक, सेक्सविहीन और द्विअर्थी शब्द है ही नहीं।** इससे भी ज्यादा, हिंदू संस्कृति में

ब्रह्मचर्य को लेकर सकारात्मक सोच है। महिला मुद्दों पर लेखन और कार्य करने वाली प्रसिद्ध कार्यकर्ता मधु किश्वर ने अपने एक लेख ''ऑफ द बीटेन पाथः रीथिंकिंग जेंडर जस्टिस फॉर इंडियन वुमेन'' में कहा हैः '' हम अभी भी उस प्राचीन भारतीय परंपरा से ओत–प्रोत हैं जो मानती है कि स्वेच्छा से सेक्स का बहिष्कार कर देने से मनुष्य को असाधारण शक्ति प्राप्त होती है ....भारतीय संस्कृति में उन महिलाओं को विशेष स्थान और सम्मान प्रदान करने की अद्‌भुत क्षमता है जिन्होंने स्वेच्छा से अविवाहित रहना या सेक्स से दूर रहना स्वीकार किया है।'' दूसरी ओर हमारी (अमेरिकी) संस्कृति में कुंवारियों के लिए 'स्वेच्छा' शब्द का प्रयोग शायद ही कभी किया जाता है जबकि सम्मान और अद्‌भुत शक्ति जैसी बातों को कभी उनकी छवि से जोड़ा नहीं जाता है। इसके अलावा, भारत में अरेंज मैरेज की प्रथा अविवाहित स्त्रियों को आत्मसम्मान के साथ जीने की आजादी दे देती है। हाल ही में कराए गए एक सर्वे में यह बात सामने आई है कि देश में अभी भी ज्यादातर लोग, यहां तक कि पढ़े–लिखे और उच्च वर्ग के कुलीन लोग भी अरेंज मैरेज को ही प्राथमिकता देते हैं, हालांकि उसमें व्यक्तिगत आधार पर कुछ संशोधन जरूर किए जाते हैं। एक निजी बातचीत में लेखक सनी सिंह बताते हैं ''भारत में अविवाहित महिलाओं को कभी अनाकर्षक नहीं समझा जाता है क्योंकि विवाह सदा से ही एक पारिवारिक मामला रहा है। लोग यह मान लेते हैं कि दहेज न होने की वजह से, सही लड़का न मिलने के कारण, कुंडली में गड़बड़ी होने के कारण या माता–पिता के उचित ध्यान न देने के कारण लड़की की शादी नहीं हो पाई।''

दूसरा सबसे बड़ा अंतर अमेरिकी सोच को लेकर है जो यह मानती है कि खुश रहने के लिए व्यक्ति का 'जोड़े' में रहना अनिवार्य है। भारत में एकल महिलाओं को ऐसी सोच का सामना नहीं करना पड़ता है। निःसंदेह भारत में विवाह को अत्यधिक महत्व दिया जाता है लेकिन इसका उद्‌देश्य परिवारों को जोड़ना है, न कि व्यक्तिगत खुशी। यहां किसी दंपति के बीच बेहतर तालमेल को उनके निजी संबंधों का परिणाम नहीं माना जाता बल्कि इसे परिवार के सहयोग से प्राप्त किया गया दीर्घकालिक परिणाम के तौर पर देखा जाता है। अपने एक आलेख 'लव एंड मैरेज' में मधु किश्वर इस नतीजे पर पहुंचती हैं कि ''बेहतर विवाह संबंध दो लोगों से अधिक के बीच का व्यवसाय है।'' भारत में व्यक्तिगत खुशी को सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण नहीं माना गया है और उसे दांपत्य से जोड़कर नहीं देखा जाता है।

इस स्थान पर मैं भारत की एक नारीवादी चिंतक उर्वशी बुटालिया के विचारों को रखना चाहूंगी, जिन्होंने नारीवादी प्रेस 'काली' की स्थापना की। 2006 में लिखी अपनी एक किताब 'चेजिंग द गुड लाइफः ऑन बिइंग सिंगल' में उर्वशी कहती हैं ''आश्चर्यजनक रूप से, मेरे एकल होने का पहला अनुभव मुझे इंग्लैंड में कराया गया.......एक ऐसी संस्कृति में जहां रिश्तों को इतनी अहमियत दी जाती है कि यदि आप किसी के साथ रिश्ते में नहीं हैं (या आपका ब्रेकअप हो गया हो तो, उम्मीद की जाती है कि आप तुरंत दूसरा संबंध बना लें) तो मान लिया जाता है जरूर आपमें कोई कमी है। इसलिए मैं हमेशा से सबसे अलग बनी रही, किसी मर्द के बिना एक ऐसी स्त्री जिसके बारे में बुरा महसूस करना चाहिए। मैं हमेशा इस बात को लेकर असमंजस में रही क्योंकि जब खुद मुझे अपने लिए बुरा महसूस नहीं हो रहा, तो फिर दूसरों को क्यों? वो अच्छा अनुभव नहीं था।''

रोमांटिक दंपतियों और कुंवारियों की पश्चिमी छवियों के प्रभाव को कम करने के लिए, भारतीय विद्वजन अब अपनी संस्कृति की सकारात्मक विरासतों को सामने लाने लगे हैं। 'चेजिंग द गुड लाइफः ऑन बिइंग सिंगल' में देश के कुछ नामचीन लेखक–लेखिकाओं, पत्रकारों और कलाकारों ने एकल होने के अपने सकारात्मक अनुभवों को साझा किया है। 28 आलेखों की इस किताब में निराशा से भरी एक भी कहानी नहीं है। एक समीक्षक ने लिखा ''एकल लोग अकेले हो सकते हैं पर उनमें अकेलापन नहीं होता, उन्हें समस्याएं हो सकती हैं मगर वे विचलित नहीं होते, उनका जीवन अर्थपूर्ण और संपूर्ण होता है।''

20 की उम्र के बाद एकाकी जीवन जीने वाली महिलाओं को लेकर लिखी गई 2007 की सर्वाधिक बिकने वाली किताब 'ऑलमोस्ट सिंगल' में आयशा रोमांटिक प्यार को लेकर संदेह जताती हैं। वे अमेरिका में एकाकी जीवन जी रहे लोगों की तुलना में अधिक सकारात्मक सोच रखती हैं। ''मजाक करने की आदत के कारण मैं अपने दोस्तों के साथ अकेलेपन को लेकर रोती हूं, लेकिन असलियत में ऐसा नहीं है। मैं अकेली नहीं हूं, बल्कि उससे कोसों दूर हूं।''

ये ठीक है कि भारत में एकल जीवन जीना अमेरिका की तुलना में मनोवैज्ञानिक रूप से ज्यादा आसान है, लेकिन यहां ऐसी महिलाओं का दैनिक जीवन कहीं अधिक कठिन होता है। मैंने पाया है कि भारत में अकेली महिलाओं को सेक्स के लिए आसानी से उपलब्ध वस्तु के रूप में देखा जाता है। 2005 की सेल्फ हेल्प बुक 'सिंगल इन द सिटी' भारत में ऐसी महिलाओं की सुरक्षा को लेकर अत्यधिक चिंता दिखाती है और ऐसी चिंता समान विषय पर लिखी गई अमेरिका की किसी भी किताब में नहीं दिखाई देती है। लेखक सनी सिंह भी मानते हैं कि भारत में विवाह से इनकार करने वाली औरतें परिवार में हिंसा की शिकार होती हैं और उनकी दशा अपने पति के घर में अत्याचार झेल रही विधवाओं से बेहतर नहीं कही जा सकती है।

भारत में एकल महिलाओं के जीवन स्तर में सुधार के लिए संघर्ष कर रहे कार्यकर्ता ऐसे सशक्त महिला आंदोलनों के लिए एकजुट हो रहे हैं जो विवाहित अथवा एकल हर प्रकार की महिलाओं को हिंसा से छुटकारा दिलाने के लिए संघर्ष कर सके। अमेरिका में एकाकी जीवन जीने वाली महिलाओं को लेकर सांस्कृतिक तौर पर सोच बदलने की जरूरत है। 'कुंवारी' शब्द का प्रयोग अब शायद ही किया जाता है लेकिन 40 से अधिक की एकाकी महिलाओं को लेकर नकारात्मक और रुढ़िवादी सोच मजबूत तौर पर मौजूद है। हमें दांपत्य और एकाकी जीवन जीने वालों के बीच की दीवार को इस प्रमाण के साथ गिराना होगा कि अच्छा जीवन एकल रहते हुए भी जिया जा सकता है और इसमें नजदीकी रिश्तेदार और मित्र शामिल होते हैं। एटीएमपी और अन्य संगठन पहले ही इस कार्य को शुरू कर चुके हैं मगर इसमें और लोगों को सहभागी बनने की जरूरत है।

(प्रस्तुत आलेख लेखिका के 2008 में अनमैरिड.ऑर्ग में प्रकाशित आलेख 'सिंगल वीमेन इन इंडियाः रेयरर, रिस्कियर एंड हैप्पीयर दैन इन द यू.एस.' का संक्षिप्त अंश है।)

देश में एकल महिलाओं ने जो मुकाम हासिल किया वह पूरे समाज को आइना दिखाने के लिए काफी है। इनकी मौजूदगी थोड़ी ही सही, मगर उल्लेखनीय है।

'पहचान' एकल महिलाओं की

जयिता मुखोपाध्याय

(एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीतिविज्ञान विभाग, वीमेंस क्रिश्चियन कॉलेज, कोलकाता)

भारतीय समाज में आज भी परंपरा आवश्यकता पर हावी है और पितृसत्तात्मक मान्यताएं औरतों की पहचान बनी हुई हैं। लगभग सभी अवसरों पर औरत की पहचान किसी–न–किसी पुरुष के साथ उसके संबंधों से ही की जाती है। नोबेल विजेता अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन जब अपनी पुस्तक 'आइडेंटिटी एंड वायलेंसः द इल्यूजन ऑफ डेस्टिनी' की शुरुआत ऑस्कर वाइल्ड के इस कथन से करते हैं ''ज्यादातर लोग दूसरे लोग हैं। उनकी सोच किसी और के विचार हैं, उनका जीवन किसी और की नकल है, उनका जुनून किसी और का कथन है'', तो इसमें मुझे भारतीय नारी का आभास मिलता है–जो सदियों से किसी की बेटी, पत्नी या मां होने की पहचान के साथ जीती आ रही है; जिसके शरीर, मस्तिष्क और यहां तक कि भाग्य तक पर उसके इर्द–गिर्द रहने वाले मर्दों का नियंत्रण है। औरत को अशुद्ध, सम्मोहक और बुद्धि–ज्ञान से हीन मानकर सदा उसे मर्दों के अधीन रहने की सलाह देने वाली मनुस्मृति से लेकर आधुनिक काल के हिंदूवादी उपदेशक तक, जो औरतों को रसोईघर तक सीमित करते हैं, के नारीद्वेषी विचारों ने औरतों को उनकी पहचान से दूर रखने की भरपूर कोशिश की है। हमारे देश में महिलाओं के प्रति ये भेदभाव कई गुना तक बढ़ जाते हैं, यदि महिला के साथ कोई पुरुषदस्ता न हो और फिर ऐसी महिलाओं को 'अपवाद' की संज्ञा दे दी जाती है। इस तथ्य की पुष्टि के लिए हमारे स्थापत्य और साहित्य में दर्जनों उदाहरण भरे पड़े हैं।

वैश्वीकरण के पश्चात, जब पूरी दुनिया में महिलाओं की गरिमा की रक्षा करने तथा शिक्षा व रोजगार तक उनकी पहुंच सुनिश्चित कराकर उन्हें मुख्यधारा में शामिल करने का आंदोलन चल पड़ा है, एकल औरतें महिला विमुक्ति की इस मुहिम का लाभ प्राप्त करने से वंचित है। महिलाओं को अपना भाग्यविधाता स्वयं बनने देने की अवधारणा भारत में आज तक ठोस स्वरूप प्राप्त नहीं कर सकी है। शिक्षा और अवसर की समानता पाने के बाद महिलाएं आज डॉक्टर, वैज्ञानिक और वकील तो बन रही हैं लेकिन घर संभालने की अपनी परंपरागत छवि को वे तोड़ नहीं पा रही हैं, और आज भी सभी जरूरी फैसलों के लिए अपने घर के मर्दों पर निर्भर हैं, उनकी शर्तों पर जी रही हैं। इस पृष्ठभूमि में देश में एकल महिलाओं की संख्या 71.4 मिलियन (जनगणना 2011) होना हमें चौंकाता है। हमारे देश में एकल होना एक विषम परिस्थिति है। गांवों में एकल वे औरते हैं जिनके पति की या तो मौत हो गई है या उन्हें छोड़ दिया गया है और इस परिस्थिति के कारण वे अवसाद में जीती हैं। लेकिन शहरों में एकल महिलाओं की एक नई श्रेणी का उदय हो रहा है जो पढ़ी–लिखी और आत्मनिर्भर हैं। ऐसे देश में जहां विवाह को धर्म से जुड़ा पावन कार्य माना गया हो, सामाजिक बंधनों को तोड़ रहीं एकल महिलाओं का मौजूद होना ध्यान आकृष्ट करता है।

2011 की जनगणना बताती है कि कुल एकल औरतों का 62 प्रतिशत गांवों में रहता है और इस मामले में शहरों की महिलाएं उनसे पीछे हैं। हालांकि पिछले एक दशक में उनकी संख्या में भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। एक बार विवाह हो जाने के बाद पुनः एकल हो जाने वाली औरतों की संख्या देश में समान परिस्थिति वाले पुरुषों के मुक.

ाबले तीन गुना अधिक है जो इस बात को रेखांकित करता है कि विधुर हो जाने के बाद पुरुष आसानी से दूसरी शादी कर लेते हैं जबकि महिलाओं के लिए यह संभव नहीं हो पाता। देश में तलाकशुदा और विधुर पुरुषों की संख्या जहां 1.6 मिलियन है वहीं ऐसी महिलाओं की संख्या करीब 3.2 मिलियन है। गांवों में लड़कियों के अविवाहित रह जाने का मुख्य कारण माता–पिता द्वारा दहेज का समुचित जुगाड़ नहीं कर पाना है। वैश्वीकरण के कारण अब आधुनिक और महंगे उत्पादों की पहुंच गांव–गांव तक हो गई है उसी के मुताबिक लड़के वालों की दहेज की सूची भी संशोधित होने लगी है। ऐसे में लड़कियों के पिता के लिए इतना दहेज जुटा पाना मुमकिन नहीं हो पाता है और उनकी बेटियां बिनब्याही रह जाती हैं। अन्य कारणों में परंपरागत कमियां, जैसे लड़की का गोरी, सुंदर और आकर्षक न होने जैसी परिस्थितयां हैं जिनके कारण लड़कियां बहुधा अविवाहित रह जाती हैं।

देश में एकल महिलाओं के लिए काम कर रही दिल्ली आधारित संस्था नेशनल फोरम फॉर सिंगल वीमेंस राइट्स ने अपने अध्ययन में बताया है कि महिलाओं के एकल रह जाने के पीछे एक बहुत बड़ा कारण मर्दों का काम की तलाश में गांव, शहर या कई बार देश के बाहर चला जाना है। मर्द अकसर बाहर जाकर दूसरी शादी कर लेते हैं और पहले से इंतजार कर रही पत्नी का परित्याग कर देते हैं। इन परित्यक्त पत्नियों को या तो अपने पतियों के कारनामे के बारे में पता ही नहीं होता या अगर वे जानती भी हैं तो समाज और परिवार में उसे उजागर करने से घबड़ाती हैं क्योंकि समाज ऐसी महिलाओं का उचित सम्मान और स्थान नहीं देता है। शहरों में इस कारण के अलावा दहेज तथा सही जीवनसाथी का न मिलना और अपनी आर्थिक व निजी स्वतंत्रता को बनाए रखने की चाह भी महिलाओं के एकल रहने के कारण बनने लगे हैं।

फोरम ने पाया है कि गांवों में अकेली रह गई महिलाओं को अपनी जीविका के लिए कड़ा संघर्ष करना पड़ता है। उन्हें सामाजिक उपेक्षा का शिकार बनना पड़ता है, विशेषकर विधवा स्त्रियों को, जिन्हें हर प्रकार के सामाजिक उत्सवों से दूर रखा जाता है तथा कई अन्य प्रकार के निषेधों का पालन भी करना पड़ता है। अकेली महिलाओं को न केवल पर्याप्त भोजन, वस्त्र और सुरक्षा से समझौता करना पड़ता है बल्कि शारीरिक और मानसिक यातना भी झेलनी पड़ती है। फोरम ने पाया कि जिन परिवारों की मुखिया महिलाएं होती हैं, उन्हें सरकारी योजनाओं तथा अधिकृत चीजों का लाभ पाने से भी वंचित रहना पड़ता है। यहां तक कि राशन कार्ड तथा अन्य सरकारी दस्तावेजों में भी उन्हें परिवार की मुखिया होने का दर्जा नहीं दिया जाता है। फोरम की सचिव सुहासिनी टुडु बताती हैं कि झारखंड में महिलाओं को जमीन का मालिक होने का अधिकर नहीं है। उनके नाम पर जमीन नहीं हो सकती है। यदि किसी महिला के पास जमीन के पर्याप्त कागजात हैं तो भी उन्हें उनके अधिकार से वंचित रखा जाता है।

हमारे देश में एकल महिलाओं को सेक्स के लिए आसानी से उपलब्ध माना लिया जाता है और बहुधा परिवार के भीतर ही उन्हें शारीरिक शोषण का शिकार बनना पड़ता है। शादी जैसे आयोजनों में जहां विधवा स्त्रियों को आने तक की मनाही होती है वहीं अविवाहित रह जाने वाली स्त्रियों को अपमानजनक टिप्पणियों का सामना करना पड़ता है। लोग उन्हें अनाकर्षक, सेक्स और मातृत्व सुख से वंचित रहने वाली और अपूर्ण औरत की संज्ञा तक दे देते हैं। अगर महिला ये कहे कि उसने अपनी मर्जी से शादी नहीं की तो बुढ़ापे का हवाला देकर उसके फैसले की कड़ी आलोचना की जाने लगती है। इन सबके बीच राहत भरी बात ये है कि महिला संगठनों के लगातार संघर्ष और प्रयासों के बाद अब एकल महिलाओं के लिए माहौल कुछ अनुकूल बनने लगा है। खेल, राजनीति, सिनेमा और विज्ञान जैसे क्षेत्रों में एकल महिलाओं ने जो उपलब्धियां हासिल की हैं उनसे ऐसी महिलाओं का सम्मान बढ़ा है। पूर्व विश्व सुंदरी तथा अभिनेत्री सुष्मिता सेन ने अविवाहित रहते हुए बच्चियों को गोद लिया और ये बता दिया कि पुरुष की मौजूदगी के बिना भी वे एक पूर्ण स्त्री और पूर्ण मां बन सकती हैं। इसी तरह राजनीति में ममता बनर्जी, मायावती और जयललिता सरीखी महिलाओं ने जो मुकाम हासिल किया वह पूरे समाज को आइना दिखाने के लिए काफी है। इन्हें अपने उद्‌देश्य को प्राप्त करने के लिए किसी पुरुष की अधीनता स्वीकार करने की आवश्यकता नहीं पड़ी। अपने लक्ष्य के लिए इन्होंने अपना जीवन समर्पित कर दिया और अंततः सत्ता के शिखर तक पहुंचीं। जिस देश में स्त्रियों को संसद में जगह पाने के लिए इतने लंबे समय से संघर्ष करना पड़ रहा हो, वहां औरतों का शीर्ष तक पहुंच जाना मायने रखता है। इनकी मौजूदगी थोड़ी ही सही, मगर उल्लेखनीय है। राजनीति और सिनेमा के अलावा भी विविध क्षेत्रों में काम कर रहीं ऐसी कई महिलाएं हैं जिन्होंने एकल रहते हुए अपने जीवन को दिशा दी और अब समाज सेवा के कार्य में भी लगी हुई हैं।

शहरी क्षेत्रों के लोगों में इस विषय को लेकर कई भ्रांतियां टूटी हैं और उनमें बड़ा बदलाव देखा जा रहा है। अगर औरतें घर से बाहर निकलकर काम कर रही हैं और परिवार की आय में योगदान दे रही हैं तो पुरुष भी रसोई में उनका साथ देने लगे हैं और बच्चों को संभालने की जिम्मेदारी को बांटने लगे हैं। स्त्री–पुरुष की जैविक जरूरतों को पूरा करने तथा संतान सुख के लिए विवाह को अनिवार्य मानने की सोच में थोड़ा बदलाव आया है। पुरुष को प्रदाता तथा स्त्री को पालन करने वाली मानने की परंपरा भी खिसकने लगी है। वैतनिक कार्यों में महिलाओं की दखल बढ़ने से परंपरागत भूमिकाओं में परिवर्तन हुआ है और अब सच्चा प्यार और सम्मान पाना, शादी के लिए लड़कियों के लिए पहली शर्त बनने लगी है।

एकल महिलाओं को असामान्य और दुर्भाग्यशाली मानने की धारणाओं को भी चोट पहुंची है। बड़े शहरों में अब एकल महिलाओं के लिए अनुकूल माहौल तैयार करने की कोशिश की जा रही है। केवल महिलाओं के लिए यात्रा पैकेज के साथ–साथ होटलों में एकल औरतों के लिए पृथक व्यवस्था तथा उनके लिए साझेदारी में होम लोन देने जैसी सुविधाएं सामने आने लगी हैं।

(प्रस्तुत आलेख इंटरनेशनल रिसर्च जर्नल ऑफ सोशल साइंसेज में प्रकाशित 'आइडेंटिटी ऑफ सिंगल वीमेन इन इंडिया : ए नैरेटिव ऑफ एक्सक्लूजन एंड स्ट्राइविंग फॉर इम्पावरमेंट' से लिया गया अंश है)

सहानुभूति नहीं समान अधिकार चाहिए

भारत में एकल महिलाओं के लिए योजनाएं एवं कानून

तेलंगाना में एकल महिलाओं के लिए पेंशन योजना

मई, 2017 में तेलंगाना देश का ऐसा पहला राज्य बन गया जिसने अपने राज्य में रह रहीं एकल महिलाओं के लिए तत्काल प्रभाव से पेंशन योजना शुरू करने की घोषणा की। इसके तहत 1000 रुपये मासिक पेंशन उन औरतों को दिया जाएगा जो एकल हैं और इनमें तलाकशुदा, परित्यक्ता और अविवाहित महिलाएं शामिल हैं। सामाजिक तौर पर उपेक्षा और भेदभाव की सबसे आसान शिकार बनने वाली एकल महिलाओं के संरक्षण में राज्य सरकार का यह कदम ऐतिहासिक साबित हो सकता है। साथ ही केंद्र व अन्य राज्यों के लिए भी यह फैसला मील का पत्थर बन सकता है। इस योजना का लाभ पाने के लिए राज्य सरकार ने जो शर्तें रखी हैं, वे इस प्रकार हैं:

1. गांवों में रहने वाली एकल औरतों की सालाना आमदनी डेढ़ लाख और शहरों में रहने वाली ऐसी औरतों की सालाना आमदनी दो लाख से अधिक नहीं होनी चाहिए।
2. एकल औरतों को किसी प्रकार की पारिवारिक या सामाजिक मदद नहीं होनी चाहिए।
3. इस पेंशन योजना का लाभ उन्हीं एकल महिलाओं को मिलेगा जिन्हें किसी अन्य सरकारी अथवा निजी पेंशन योजना का लाभ नहीं मिल रहा हो।
4. यदि पेंशन पा रहीं एकल महिलाएं दोबारा शादी कर लेती हैं या उन्हें रोजगार प्राप्त हो जाता है तो उन्हें दी जाने वाली सहायता राशि बंद कर दी जाएगी।
5. इसके तहत 18 वर्ष या उससे अधिक की सभी तलाकशुदा या परित्यक्ता महिलाएं शामिल हो सकती हैं।
6. गांवों में रहने वाली 30 वर्ष या उससे अधिक की अविवाहित स्त्रियां तथा शहरों में 35 वर्ष या उससे अधिक की अविवाहित स्त्रियों को इसके अंतर्गत लाभ मिल सकता है।
7. इस योजना के अलावा राज्य के सभी जिलाधिकारियों को कहा गया है कि वे एकल महिलाओं को जीविका के अवसर उपलब्ध कराएं अथवा उन्हें स्वरोजगार के लिए भूमि या अन्य संसाधन मुहैया कराएं।

तेलंगाना सरकार की यह मुहिम लंबे समय से संघर्ष कर रहीं एकल महिलाओं के पक्ष में एक बड़ी जीत है।

गोद लेने का अधिकार है मगर अड़चनें भी

'इंडियन एसोसिएशन फॉर प्रमोशन ऑफ एडॉप्शन एंड चाइल्ड केयर' के आंकड़े बताते हैं कि देश में एकल महिलाओं द्वारा बच्चों को गोद लेने के मामलों में वृद्धि हो रही है। हमारे यहां वैसे तो एकल स्त्रियों को गोद लेने का अधिकार दिया गया है लेकिन सामाजिक निषेध एवं परंपरागत सोच के कारण अकेली महिलाओं को गोद लेने से रोकने के लिए कई प्रकार की बाधाएं उत्पन्न की जाती हैं। उनसे सवाल पूछे जाते हैं कि उन्होंने शादी क्यों नहीं की, वे किसके साथ रहती हैं और बच्चे का पालन–पोषण कौन करेगा? आर्थिक रूप से स्वतंत्र और शिक्षित औरतों से ऐसे सवाल पूछना उनके अस्तित्व को नकारने जैसा है। सेंट्रल एडॉप्शन रिसोर्स अथॉरिटी (कारा) एकल महिलाओं के सामने गोद लेने के लिए निम्न शर्तें को रखता है:

1. अकेली मां और बच्चे की उम्र के बीच कम–से–कम 21 वर्ष का अंतर होना चाहिए
2. यदि कोई एकल महिला 0 से 3 वर्ष तक के बच्चे को गोद लेना चाहती है तो उसकी उम्र 30 से 45 वर्ष के बीच होनी चाहिए
3. एकल अभिभावकों को परिवार का सहयोग होना चाहिए

कारा की उपरोक्त शर्तें एकल माताओं के लिए हैं लेकिन जरूरी नहीं कि इन्हें पूरा कर लेने के बाद उन्हें बच्चा मिल ही जाए। कई ऐसी एकल महिलाएं और पुरुष हैं जिन्हें बच्चा गोद लेने के लिए तीन साल तक का इंतजार करना पड़ा। हर बार कोई–न–कोई प्रावधान जोड़कर उन्हें गोद लेने की योग्यता से वंचित रखने का प्रयास किया जाता रहा। यही परेशानी तलाकशुदा औरतों को भी झेलनी पड़ती है जब वो किसी बच्चे को गोद लेना चाहती हैं। अकसर उनके घरवाले ही उन्हें ऐसा करने से रोकते हैं और दूसरी शादी करने के लिए दबाव डालते हैं।

दरअसल एकल मां की अवधारणा को आज भी लोग न तो समझ पा रहे हैं और न ही पचा पा रहे हैं। चाहे स्कूल हो या पड़ोसी, बच्चे से पहला सवाल यही पूछा जाता है कि उसके पिता का नाम क्या है? ऐसे में बिना पिता के बच्चों की परवरिश करना किसी भी एकल मां के लिए बड़ी चुनौती है। हालांकि अब कई सामाजिक संस्थाएं और समूह ऐसी महिलाओं की मदद के लिए सामने आ रहे हैं।

पंचवर्षीय योजनाओं में जगह देने की तैयारी

केंद्र सरकार अभी तक एकल महिलाओं के लिए कोई ठोस कानून लेकर सामने नहीं आ सकी है। हालांकि पंचवर्षीय योजना में ऐसी महिलाओं के लिए प्रावधान किए जाने की बात हो रही है लेकिन अभी तक उसे साकार रूप नहीं दिया जा सका है। 2012 में ही इस विषय पर बात करते हुए आयोग की सदस्य सईदा हमीद ने पत्रकारों से कहा था कि सरकार की कोशिश है कि नौकरियों में एकल महिलाओं के लिए आरक्षण की व्यवस्था की जा सके। हमीद ने कहा कि अब समय आ गया है जब एकल महिलाओं को मुख्य मंच पर लाया जाए और उनकी समस्याओं को पृथक तौर पर देखा जाए। उन्हें पारिवारिक श्रेणी

में न रखकर अलग श्रेणी में रेखांकित किया जाए और तदनुसार कार्यक्रम और कानून बनाए जाएं। देश में एकल महिलाओं की संख्या 71.4 मिलियन है और यदि इसमें लापता हुए लोगों की अकेली बीवियों को भी शामिल कर लिया जाए तो संख्या कहीं अधिक बढ़ सकती है। 'द हिंदू' अखबार से बात करते हुए एनएफएसडब्ल्यूआर (NFSWR) की गिन्नी श्रीवास्तव कहती हैं कि निम्न आयवाली एकल महिलाओं के लिए जीना बेहद मुश्किल है। न तो उन्हें सरकार की ओर से किसी कानून अथवा योजना का संरक्षण प्राप्त है और न ही समाज से। जो कुछ योजनाएं बनी भी हैं तो उनतक पहुंच पाना उनके लिए असाध्य है। इन सबके अतिरिक्त लोगों की सोच और सामाजिक वर्जनाएं तो उनके रास्ते में कांटे बिछाने के लिए मौजूद हैं ही।

राष्ट्रीय नीति में अलग स्थान देने की सिफारिश

2016 में बनी महिलाओं के लिए राष्ट्रीय नीति में भी एकल महिलाओं की समस्याओं को ध्यान में रखकर उनके लिए अलग से नीति बनाने की बात कही गई है। इसमें कहा गया है "महिलाओं के लिए वर्तमान में मौजूद आधारभूत संरचनाओं को और सुदृढ़ किया जाएगा ताकि कमजोर, उपेक्षित, प्रवासी तथा एकल स्त्रियों को बेहतर माहौल प्रदान किया जा सके।" साथ ही इसमें कहा गया है कि एकल महिलाएं, जिनमें विधवा, तलाकशुदा, परित्यक्ता तथा अविवाहित महिलाएं शामिल हैं, की विशेष जरूरतों को ध्यान में रखते हुए सघन सामाजिक सुरक्षा तंत्र विकसित किया जाएगा जिससे उनकी सुरक्षा हो सके, रोजगार के अवसर मिलें और इस प्रकार संपूर्ण कल्याण हो सके।

देश में एकल महिलाओं की दशा पर देर से ही सही पर सरकार और समाज का ध्यान गया है। जरूरत है उनकी आवश्यकताओं को समझने की तथा उनके लिए संघर्ष कर रहे सामाजिक संगठनों की मांगों पर विचार करने की। खासकर गांवों और छोटे शहरों में रह रहीं एकल महिलाएं बेहद विपरीत परिस्थितियों से गुजर रही हैं, उनके लिए शीघ्र और स्पष्ट योजनाओं को आकार देने की जरूरत है।

कुछ मांग, कुछ सिफारिशें

राष्ट्रीय एकल नारी अधिकार मंच (NFSWR) की 2012 में प्रकाशित रिपोर्ट **'हमारी उपेक्षा कब तक'** में एकल औरतों को संगठित और सशक्त करने के लिए सरकार और समाज के सामने कुछ मांग और सिफारिशें रखी गई हैं जिन्हें हम इस प्रसंग में शामिल कर सकते हैं।

- राज्य व केन्द्र स्तर की सरकारें उचित कानून, नीतियां, योजनायें व पर्याप्त संसाधन मुहैया कराएं, जिन तक कुछ मदद के साथ एकल महिलाएं अपनी पहुंच स्थापित कर पाएंगी।
- पड़ोसी, परिवार के सदस्य और समाज, एकल महिलाओं को मज़बूत औरत, इज़्जतदार औरत, एक अच्छी औरत के रूप में देखें ना कि 'बुरी औरत' या एक समस्या के रूप में।
- संगठन, जिनकी वह सदस्य हैं, उन्हें सम्मानित व वांछनीय होने का एहसास कराएं, उनकी समस्याओं के समाधान में मदद करें, मुश्किल में उनके साथ खड़े रहें और उन्हें एक 'वैकल्पिक परिवार' की सदस्य होने का विश्वास दें।
- समाज व समुदाय के नेतृत्वकर्ता, धर्मनिरपेक्ष वकील और एक जानकार महिला आंदोलन आवश्यकतानुसार विवाह, तलाक, उत्तराधिकार, अभिरक्षा आदि से संबंधित व्यक्तिगत/पर्सनल कानूनों में बदलाव लाएं।
- खुले विद्यालयों व विश्वविद्यालयों का प्रयोग कर, प्रशिक्षणों में भाग लेकर, शैक्षणिक भ्रमण के ज़रिये एकल महिलाएं अपनी योग्यता व ज्ञान का विकास करें।
- सामाजिक क्षेत्र में अपने काम व नेतृत्व के लिये उन्हें पहचाना जाए।
- एकल महिलाएं उनके समक्ष खड़ी चुनौतियों का सामना कर सकें इसके लिये संगठित होना एक कारगर रणनीति है। सितम्बर 2011 में सात राज्यों की 80,000 से अधिक एकल महिलाएं संगठित हैं। लेकिन इस देश में आधी से ज़्यादा एकल औरतें गरीब हैं। एकल महिलाओं के संगठनों को अलग-अलग राज्यों में और अधिक संख्या में पहुंचना होगा।
- 60 वर्ष से अधिक आयु की वृद्ध महिलाओं ने इस शोध में अधिक संख्या में भाग नहीं लिया है। यह संभव है कि बढ़ती उम्र के साथ बिगड़ती सेहत और बाहर आने-जाने में तकलीफ़ के कारण संगठन की गतिविधियों में वृद्ध महिलाएं भाग नहीं ले पाती हैं। संगठनों को कुछ नवीन प्रयोग करने होंगे जिससे कि वृद्ध महिलाएं भी सक्रिय सदस्य बन पायें।

आंकड़ों में एकल महिलाएं

क्र.	राज्य	विधवा महिलाएं (18 वर्ष व अधिक उम्र)	तलाकशुदा व परित्यक्ता महिलाएं (18 वर्ष व अधिक उम्र)	अविवाहित महिलाएं (30 वर्ष व अधिक उम्र)	कुल संख्या
1	बिहार	18,76,012	32,707	90,153	19,98,872
2	गुजरात	16,08,261	1,03,517	1,05,049	18,16,827
3	हिमाचल प्रदेश	2,28,923	8,155	13,801	2,50,879
4	झारखंड	8,19,335	42,346	78,892	9,40,573
5	महाराष्ट्र	37,17,801	3,20,793	2,43,512	42,82,106
6	राजस्थान	15,83,261	47,354	43,270	16,73,885
	कुल संख्या	98,33,593	5,54,872	5,74,677	1,09,63,142

श्रोत : राष्ट्रीय एकल नारी अधिकार मंच (NFSWR) की 2012 में प्रकाशित रिपोर्ट 'हमारी उपेक्षा कब तक'

- 2011 की जनगणना के मुताबिक, देश में एकल महिलाओं की संख्या 71.4 मिलियन है जो कि 2001 की जनगणना के समय 51.2 मिलियन थी और इसमें उल्लेखनीय रूप से 39 प्रतिशत का इजाफा हुआ है।
- एकल महिलाओं की श्रेणी में पति द्वारा छोड़ी गई, विधवा, तलाकशुदा और अविवाहित स्त्रियां आती हैं और इनकी संख्या देश में कुल महिलाओं की संख्या का 8.6 प्रतिशत है।
- समस्त एकल महिलाओं में से 62 प्रतिशत गांवों में निवास करती हैं जिनकी संख्या 44.4 मिलियन है जबकि शहरी महिलाओं की संख्या इनसे कम है।
- गांवों में 29.2 मिलियन औरतें विधवा हैं जबकि 13.2 मिलियन ने कभी शादी नहीं की। शहरों में 13.6 मिलियन औरतें विधवा हैं जबकि 12.3 मिलियन औरतों ने कभी विवाह नहीं किया।
- 12 मिलियन एकल महिलाओं के साथ उत्तर प्रदेश ऐसी महिलाओं के मामले में शीर्ष पर है। इनमें से ज्यादातर ने कभी शादी नहीं की।
- महाराष्ट्र दूसरे नंबर है और वहां एकल महिलाओं की संख्या 6.2 मिलियन है जबकि आंध्र प्रदेश 4.7 मिलियन एकल महिलाओं के साथ तीसरे नंबर पर है।
- ऐसी औरतें जिन्होंने एक बार शादी की और अब एकल हैं, उनकी संख्या एक समान परिस्थिति वाले पुरुषों की तुलना में तीन गुना ज्यादा है। यही कारण है कि देश में विधवाओं की संख्या विधुरों की तुलना में कहीं कम है।
- देश में विधुरों की संख्या जहां 1.6 मिलियन है वहीं विधवाओं की संख्या 3.2 मिलियन है। इसी तरह जिन औरतों की शादी टूट गई है उनकी संख्या ऐसे ही परिस्थिति वाले पुरुषों की तुलना में दोगुना है।
- देश में करीब 27 मिलियन घर यानी कुल 11 प्रतिशत घरों का नेतृत्व महिलाओं के हाथों में है।
- सबसे अधिक महिलानीत घरों की संख्या लक्षदीप में है जहां इनकी संख्या 43.7 प्रतिशत है जबकि केरल दूसरे नंबर पर है और यहां महिलाओं द्वारा चलाए जाने वाले घरों की संख्या 23 प्रतिशत है।
- सात राज्यों–छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा और गुजरात में महिला नेतृत्व वाले घरों की संख्या 20 प्रतिशत से अधिक है।
- 20–24 के आयुवर्ग में 23 प्रतिशत (16.9 मिलियन) महिलाएं एकल हैं जो यह दर्शाता है कि लड़कियों की शादी के उम्र में बदलाव आया है।
- इसके बाद 60–64 वर्ष की एकल महिलाओं की संख्या अधिक है और यह करीब 7 मिलियन है।

उत्तर–पूर्व में संख्या ज्यादा मगर हालात एक जैसे

उत्तर–पूर्व के गांवों में अविवाहित लोगों की संख्या सबसे अधिक है जबकि महिला नेतृत्व वाले घरों की संख्या भी राष्ट्रीय औसत से ज्यादा है। जनगणना 2011 के आंकड़ों के मुताबिक, उत्तर–पूर्व के गांवों में अविवाहित रहने वाले लोगों की संख्या 47.42 प्रतिशत है और यह 41.64 प्रतिशत के राष्ट्रीय औसत से अधिक है। सिक्किम और नगालैंड में अविवाहित लोगों की संख्या 55.88 प्रतिशत है जो उत्तर–पूर्व में सबसे अधिक है।

असम के बारे में **स्क्रॉल.इन** में **कंचन गांधी** कहती हैं कि महिलाएं कई कारणों से अविवाहित रह जाती हैं। इनमें उनकी अपनी इच्छा के अलावा मां–बाप की जल्दी मृत्यु हो जाना, गरीबी या छोटे भाई–बहनों की देखभाल करना जैसे कारण हो सकते हैं। हालांकि कारण चाहे जो भी हों, समाज की बंदिशें और तानों को उन्हें एक–समान ही सहना पड़ता है। इनमें भी अगर एकल महिला रोजगार में हो तब तो उसके लिए अपनी सुरक्षा करना थोड़ा आसान हो जाता है वरना बिना आयवाली महिलाओं के लिए जीना दूभर हो जाता है। काम करने वाली एकल औरतें अपनी आय का बड़ा हिस्सा बच्चों और परिवार की देखभाल पर खर्च कर देती हैं। दोनों ही परिस्थितियों में रहने वाली एकल औरतों को परिवार पर बोझ समझा जाता है और उनके साथ दुर्व्यवहार किया जाता है। कंचन कहती हैं कि असम में एकल महिलाओं के एक समूह की सदस्यों ने बताया कि परिवार के प्रति उनकी जिम्मेदारी तय कर दी जाती है। खासकर जब माता–पिता बीमार हों या भाई–बहनों को उनकी जरूरत हो, तब उनके पास खुद के बारे में सोचने का मौका नहीं होता। उन्हें अपनी पढ़ाई तक छोड़नी पड़ जाती है। दारांग में रहने वाली एक एकल स्त्री ने बताया कि वह खेत में काम करके रोज 20 से लेकर 100 रुपए तक कमा लेती है। ईद के समय उसे 10 दिन तक लगातार दिन–रात काम करना पड़ा ताकि वह रोज के 150 रुपए कमा सके और उससे अपने बच्चों के लिए नए कपड़े खरीद सके। हालांकि उसे अपने इलाज के लिए दूसरों से उधार लेना पड़ा।

चित्र : एक्शनएड

जमीन–जितनी तुम्हारी, उतनी हमारी

भारत में परंपरागत तौर पर महिलाओं के पास खुद की जमीन नहीं होती। उन्हें उसके लिए अधिकृत ही नहीं माना जाता। संपत्ति और जमीन के अधिकार पुरुषों के विशेषाधिकार की तरह होते हैं और औरत केवल उनकी आश्रित बनकर रह सकती है। विधवा, परित्यक्ता और अविवाहित औरतों के लिए तो जमीन पर अधिकार होने का सवाल ही नहीं उठता क्योंकि सामाजिक जीवन के अन्य क्षेत्रों में जब उनके लिए स्थान नहीं बनाया गया है तो फिर जमीन और संपत्ति की बात बेमानी है।

शहरी और पढ़ी–लिखी एकल औरतें अपनी शिक्षा और रोजगार के बल पर तथा विभिन्न संगठनों से जुड़कर कुछ हद तक अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हुई हैं लेकिन ग्रामीण, अशिक्षित और पिछड़े समुदायों में यह समस्या अधिक गहरी है। पिछड़े और पीछे छोड़ दिए गए समुदायों के पास प्रायः जमीन नहीं होती। ऐसे में इन्हें हर समय खुद को सभी उपलब्ध संसाधनों से भी बेदखल कर दिए जाने का भय समाया रहता है। किसी भी आधिकारिक संपत्ति का मालिक न होने की वजह से इन्हें सरकारी योजनाओं तथा सेवाओं का लाभ नहीं मिलता और न ही काम शुरू करने के लिए बैंक से कर्ज। जब पूरे समुदाय का ये हाल है तो सोचा जा सकता है कि इनकी महिलाओं की क्या दशा होती होगी। उन्हें तो परंपरागत रूप से ही हर प्रकार के अधिकार से वंचित रखा जाता है, फिर चाहे वो संपत्ति का अधिकार हो या समानता का।

वास्तव में जमीन के छोटे से टुकड़े का भी यदि उन्हें स्वामित्व मिल जाए तो उनके पंख उड़ान भरने लगते हैं। जमीन का मालिक होने का मतलब है हर समय बेदखली का भय न होना और फिर अपनी जमीन में निवेश करने का अधिकार प्राप्त होना। वे सब्जियां उगा सकती हैं, पशुओं के लिए आश्रय बना सकती हैं, अपना घर बना सकती हैं या कोई घरेलू उद्योग चला सकती हैं। इसके अलावा जमीन का मालिक बन जाने से उन्हें कई सामाजिक और सरकारी सेवाओं का भी लाभ मिलने लगता है, जैसे कि–बिजली और पानी का कनेक्शन, शौचालय तथा कृषि और पशुपालन के लिए मिलने वाली सरकारी सहायता।

रायटर्स.कॉम के लिए मणिपद्म जेना लिखती हैं, ''सात साल पहले जब उसके पति की मौत हुई, 37 साल की कुनी माझी ने भूख, बीमारी, गरीबी और शराबियों द्वारा खुद को प्रताड़ित होते हुए पाया। सबसे बुरा ये कि कुनी ने सारी उम्मीदें भी खो दी थीं। तभी उसे जमीन का एक छोटा–सा टुकड़ा सरकार की ओर से तोहफे में मिला। ये जमीन का टुकड़ा उसके लिए आशा की किरण नहीं बल्कि पूरी रोशनी साबित हुई और उसने फिर से जीना शुरू कर दिया।'' माझी

जैसी एकल महिलाएं सिर्फ उड़ीसा या पश्चिम बंगाल ही नहीं, बल्कि पूरे भारत में जमीन के टुकड़े पर अधिकार के लिए तरस रही हैं। क्योंकि वे जानती हैं कि यह टुकड़ा उन्हें अपनी खोई इज्जत, समाज में स्थान, रोजगार का साधन और सबसे बढ़कर जिंदगी लौटा सकता है। जेना अपने लेख में उड़ीसा के मयूरभंज जिले का जिक्र करते हुए कहती हैं कि यहां प्रशासन ने अकेली महिलाओं को जमीन का पट्टा देने का अभियान चलाया है जिसके बाद इनका जीवन बदलने लगा है। ज्यादातर छोटे बच्चों के साथ जी रहीं गरीब और पिछड़े समुदाय की एकल महिलाएं बहुधा मानव तस्करी और डायन प्रताड़ना की शिकार हो जाती हैं। उनका जीवन नरक से भी बदतर हो जाता है। इनकी तकलीफों को देखते हुए ही उड़ीसा के 2014 की राज्य नीति में कहा गया है कि सालाना 615 रुपये से कम आय वाली एकल औरतों को राज्य की ओर से 4,350 स्कावयर फीट यानी एक टेनिस कोर्ट के आकार के बराबर जमीन पाने का अधिकार होगा। इसे पाने के लिए महिला को यह साबित करना होगा कि वह अकेली है। मयूरभंज जिले में इस नीति को अमलीजामा पहनाने के भरपूर प्रयास किए गए हैं और इसके सार्थक परिणाम भी सामने आए हैं।

महाराष्ट्र एक ऐसा राज्य है जो एक खास वजह से हमेशा सुर्खियों में रहता है। यहां का मराठवाड़ा सबसे गरीब क्षेत्रों में आता है जहां से फसल बर्बाद हो जाने के कारण किसानों द्वारा आत्महत्या कर लिए जाने की खबरें सबसे ज्यादा आती हैं। यही वजह है कि यहां विधवा, छोड़ दी गईं और अविवाहित औरतों की संख्या भी बहुत ज्यादा है। ज्यादातर औरतें पति के आत्महत्या कर लेने के कारण विधवा हो गई हैं, कई को बेटा पैदा न कर पाने के कारण घर से निकाल दिया गया है तो अनेक औरतें खेती तबाह हो जाने के बाद पति के दूसरे शहरों में चले जाने के कारण परित्यक्ता का जीवन जी रही हैं। ऐसी औरतों के पास न तो अपने निर्वाह के लिए कोई रोजगार होता है, न जमीन और न ही सरकार की ओर से कोई मदद। हर दिन, हर घंटा उनके लिए संघर्ष और शोषण भरा होता है। यहां तक कि अपनी पहचान तक उनके पास नहीं होती क्योंकि हर कागजात और पहचान पत्र उनके पति या पिता के नाम पर होता है।

भारत में केवल 13 प्रतिशत जमीनों पर ही औरतों का स्वामित्व है। ये आंकड़े एकल दलित महिलाओं के मामले में और कम हो जाते हैं। ज्यादातर राज्यों में जहां विधवा औरतों के लिए औसत 500 रुपये मासिक पेंशन निर्धारित किया गया है वहीं तलाकशुदा, परित्यक्ता और अविवाहित महिलाओं के लिए किसी भी प्रकार का सरकारी संरक्षण मौजूद नहीं है और न ही उन्हें किसी कल्याणकारी योजना का लाभ मिल पाता है। इसके विपरीत जब बात संपत्ति की आती है तो वो भी परंपरावाद को ध्यान में रखते हुए पुरुषों के खाते में चली जाती है।

महाराष्ट्र के उस्मानाबाद जिले में दलित एकल महिलाओं के लिए काम कर रहे संगठन 'पर्याय' का मानना है कि 30 गांवों में आधी महिलाएं अकेली हैं और उनमें भी ज्यादातर दलित हैं। **रायटर्स.कॉम** के लिए रीना चंद्रन बताती हैं कि इन एकल महिलाओं का समाज में कोई वजूद नहीं हैं क्योंकि इनके साथ किसी पुरुष का नाम नहीं जुड़ा है। 'पर्याय' कहता है कि सरकारी योजनाओं का लाभ प्राप्त करने के लिए एकल महिलाओं को अपना अस्तित्व साबित करने के लिए कड़ी मेहनत करनी पड़ती है क्योंकि ये सरकार को दिखाई नहीं देतीं। यदि कोई स्त्री विधवा हो जाती है और उसका एक बेटा भी है तो पति की संपत्ति उसके बेटे के नाम पर हो जाती है और मां को केवल संरक्षक का दर्जा दिया जाता है। ऐसी सोच वाले समाज में अकेली औरतों के लिए जमीन का अधिकार पाना टेढ़ी खीर है।

उड़ीसा के बारीपदा में जमीन का पर्चा मिलने पर खुश महिलाएं। *श्रोतः द न्यूयार्क टाइम्स*

2011 के आंकड़े बताते हैं कि देश में महिलाओं द्वारा चलाए जा रहे 41 प्रतिशत परिवारों के पास खुद की जमीन नहीं है और वे दिहाड़ी मजदूर का जीवन बिता रहे हैं। जबकि सही मायने में खेती यहां औरतों का काम ही माना जाता है और एक अध्ययन के मुताबिक तीन–चौथाई भारतीय औरतें कृषि के कार्य में लगी हुई हैं। महिलाओं के भूमि संबंधी अधिकार पर बहुचर्चित पुस्तक 'ए फिल्ड ऑफ वन्स ओन' में लेखिका बीना अग्रवाल कहती हैं कि भारत में महिलाओं का जमीन पर अधिकार होना अकेला ऐसा कारक हो सकता है जो उन्हें हर प्रताड़ना से मुक्ति दिला सकता है। यदि किसी महिला के नाम से जमीन है तो उसका पति उसे कभी छोड़ देने या घर से निकाल देने के नाम पर उसपर अत्याचार नहीं कर सकता है क्योंकि उसे पता है कि महिला के पास अपना एक ठिकाना है। जमीन होने से शादी के मौके पर लड़कियां भी तोल–माल करने की स्थिति में आ सकती हैं। उनका आत्मविश्वास बढ़ता है और वे हर परिस्थिति का सामना करने के लिए तैयार रहती हैं।

उड़ीसा में जिस तरह औरतों को जमीन के पट्टे दिए गए वो तारीफ के काबिल है लेकिन राज्य नीति में केवल उन महिलाओं को जमीन देने की बात की गई है जो नितांत अकेली हैं। इसमें उन विधवाओं, परित्यक्ताओं और अविवाहिताओं को छोड़ दिया गया है जो परिवारों की दया पर जीती हैं। पति की मौत के बाद उसकी जमीन पर भाई का अधिकार हो जाता है क्योंकि पत्नी के बारे में यह मान लिया जाता है कि वो आश्रित है। वो या तो अपने मां–बाप या सास–ससुर की आश्रित बनकर जीवन यापन करती है जबकि इस दौरान कई बार उनकी जिंदगी नरक से भी बदतर कर दी जाती है। फिर भी जिस तरह उड़ीसा ने एक पहल की, इसी तरह दूसरे राज्यों की कोशिश का इंतजार है।

क्या हैं एकल अभिभावक परिवार

भारत में एकल महिलाओं द्वारा चलाए जाने वाले परिवारों पर एक रिपोर्ट

डॉ. शालिनी भारत

भारत या पूरी दुनिया में भी एकल अभिभावक परिवार कोई नया विचार नहीं है। कुछ नया है तो बस ये कि अब समाज विज्ञानी इसपर अधिक ध्यान केंद्रित करने लगे हैं। इसके पीछे जो कारण हैं उनमें पिछले कुछ दशकों में सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में आए परिवर्तन शामिल हैं। चाहे वे तीव्र औद्योगिक विकास वाले पश्चिम के देश हों या तीसरी दुनिया के विकासशील और अर्द्धविकसित देश, परिवारों की प्रकृति और शैली में बदलाव हुए हैं और वे परंपरागत परिवारों से एकदम भिन्न हैं।

ज्यादातर एकल अभिभावक परिवारों में महिलाएं मुखिया हैं जिनपर बच्चे आश्रित हैं और वे गरीबी रेखा के नीचे बसर करते हैं। एक अनुमान के मुताबिक, दुनिया में 25 से 33 प्रतिशत परिवार महिलाओं द्वारा चलाए जाते हैं जो शादी टूटने, छोड़ दिए जाने या पति के प्रवास पर चले जाने के कारण अकेली हो गई हैं और स्वयं व बच्चों के आर्थिक भरण–पोषण के लिए अकेली जिम्मेदार हैं। हालांकि यहां स्पष्ट करना होगा कि एकल अभिभावक परिवारों में महिला अथवा पुरुष दोनों द्वारा चलाए जाने वाले परिवार शामिल किए जाते हैं। महिला मुखिया वाले परिवारों के बारे में विद्वानों की राय है कि वे परिवार जो विधवा, तलाकशुदा, परित्यक्ता, अलग रह रहीं, अविवाहित या जिनके पति बीमारी या बेरोजगारी के कारण आर्थिक कार्य कर सकने में असमर्थ हों, ऐसी एकल महिलाओं द्वारा चलाए जाते हैं, महिला नेतृत्व वाले परिवारों में गिने जाते हैं। एकल अभिभावक परिवारों को परिभाषित करने में एक और पक्ष का ध्यान रखा जाता है और वह हैं बच्चे। एकल अभिभावकों का दायित्व बच्चों को पालने और उनका भविष्य बनाने से जुड़ा है जबतक कि उनकी जिंदगी व्यवस्थित न हो जाए। जब तक बच्चों को नौकरी नहीं लग जाती या उनकी शादी नहीं हो जाती है, तब तक वे अपने एकल अभिभावक पर आश्रित रहते हैं लेकिन उसके बाद अभिभावकों को अपने दायित्व से मुक्ति मिल जाती है। इसलिए एकल अभिभावक वाले परिवारों की समस्याओं पर विमर्श करते समय यह ध्यान देना आवश्यक है कि उनके बच्चे अभी छोटे हैं या उनकी नौकरी या शादी हो चुकी है।

तीसरी दुनिया के देशों में, जिनमें भारत भी शामिल है, एकल अभिभावक वाले परिवारों की गणना करना मुश्किल काम है, क्योंकि यहां जनगणना में सेक्स, वैवाहिक स्थिति, उम्र इत्यादि के आधार पर परिवार के मुखिया का वर्गीकरण नहीं किया जाता। फिर, इन देशों में पितृसत्तात्मक परिवारों का प्रचलन है जिनमें महिलाओं को मुखिया मानने की परंपरा नहीं होती। उदाहरण के लिए, अगर कोई स्त्री विधवा है लेकिन उसके एक बेटा है तो उस बेटे को ही परिवार का मुखिया माना जाएगा, विधवा स्त्री को नहीं। भले ही पति की मौत के बाद सारी जिम्मेदारी और परिवार का खर्च विधवा उठाती हो। ऐसे में न केवल महिला नेतृत्व वाले परिवारों का पता लगाना कठिन हो जाता है बल्कि उनके लिए बनी सामाजिक एवं कल्याणकारी योजनाओं का भी पूरा लाभ उन्हें नहीं मिल पाता है।

भारत में ऐसे परिवारों पर अध्ययन भी बहुत सीमित हुए हैं, जिसके कारण सही जानकारी और आंकड़े नहीं मिल पाते हैं। कुछ साल पहले आई वाईडब्ल्यूसीए की रिपोर्ट में एकल अभिभावक वाले परिवारों के बारे में बताया गया था कि शहरों में रहने वाली तलाकशुदा औरतों को कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। अध्ययन में पाया गया कि ज्यादातर महिलाओं का तलाक शादी के बाद पहले तीन वर्षों में ही हो जाता है और उसके पीछे पति की नपुंसकता, पति की जानकारी के बिना विवाह किया जाना या ससुरालवालों द्वारा प्रताड़ित किया जाना आदि कारण बताए जाते हैं। तलाक लेने में महिलाओं की इच्छा का संबंध उसकी शिक्षा से जुड़ा होता है। परिवार टूटने के बाद करीब दो–तिहाई औरतों को समाज में नकारात्मक दृष्टि से अथवा उपेक्षा से देखा गया। 50 प्रतिशत से अधिक औरतों को तलाक के बाद बेहद गरीबी में जीना पड़ा या परिवार वालों की दया पर आश्रित रहना पड़ा। ज्यादातर औरतें आर्थिक रूप से विपन्न हो गईं क्योंकि वे पढ़ी–लिखी नहीं थी और उनके पास कोई रोजगार भी नहीं था। शादी टूटने की घटना का कई औरतों पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी पड़ा और कई ने अपनी जान देने की कोशिश की। कई औरतें अवसाद, हिस्टीरिया, नींद और बेचैनी की बीमारी से ग्रस्त हो गईं। पति–पत्नी में तलाक का बुरा असर बच्चों पर भी देखा गया और उनमें भय, अकेलापन, घर से भाग जाने तथा बचे हुए अभिभावक को भी खो देने का भय समा जाता है। सामाजिक रूप से भी वे या तो बहुत उग्र होते हैं या उनमें भाग जाने

हमारे देश में पितृसत्तात्मक परिवारों का प्रचलन है जिनमें महिलाओं को मुखिया मानने की परंपरा नहीं होती। उदाहरण के लिए, अगर कोई स्त्री विधवा है लेकिन उसके एक बेटा है तो उस बेटे को ही परिवार का मुखिया माना जाएगा, विधवा स्त्री को नहीं। भले ही पति की मौत के बाद सारी जिम्मेदारी और परिवार का खर्च विधवा उठाती हो।

की प्रवृत्ति होती है।

1975 में तलाकशुदा हिंदु महिलाओं पर किए गए एक अध्ययन में उनकी समस्याओं पर प्रकाश डाला गया। इसमें कहा गया कि समस्याओं का स्तर कई वर्गों में विभाजित था, जैसे कि उनकी सामाजिक एवं आर्थिक अवस्था, जाति में उनकी पहचान, उनकी शिक्षा तथा उनके पालन–पोषण का स्तर, मायके का माहौल–परंपरावादी या आधुनिक तथा उनकी स्वयं की आर्थिक आजादी इत्यादि। यद्यपि तलाक के बाद लगभग सभी महिलाओं को समाज में एकाकीपन झेलना पड़ा तथापि निम्न मध्यम वर्ग की औरतों को आर्थिक तौर पर, परिवार द्वारा स्वीकारे जाने तथा अपनी जिंदगी को दोबारा व्यवस्थित करने में कहीं अधिक तकलीफों का सामना करना पड़ा।

पुरुषों द्वारा काम की तलाश में अन्यत्र प्रवास कर जाने का भी महिलाओं पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। लंबे समय तक पति के बाहर रहने के कारण उनकी पत्नियों को परिवार की बढ़ी हुई जिम्मेदारियों को अकेले पूरा करना पड़ता है तथा साथ ही कई मनोवैज्ञानिक परेशानियों से भी गुजरना पड़ता है। अकसर महिलाओं को तनाव, घबड़ाहट, दबाव और विवादों का सामना करना पड़ता है। तलाक का भारत में महिलाओं और बच्चों पर अकसर बुरा प्रभाव ही पड़ता है क्योंकि आज भी यहां विधवाओं और एकल महिलाओं के प्रति लोगों में उपेक्षा, अनादर और अविश्वास की भावना होती है। लगभग सभी समाजों में विधवाओं को पुनर्विवाह की अनुमति नहीं दी जाती है। हालांकि इस मामले में निम्न जाति के लोग ज्यादा उदार प्रवृत्ति दिखाते हैं और इनमें औरतों के पुनर्विवाह के उदाहरण देखे जाते हैं। पंजाब के कुछ हिस्सों में और लगभग सभी हिंदुओं में भी विधवा के साथ मृतक पति के छोटे भाई की शादी के मामले भी देखे जाते हैं।

(लेखिका टाटा इंस्टीच्यूट ऑफ सोशल साइंसेज, देवनार में प्रोफेसर हैं तथा यह आलेख के उनके शोधपत्र 'भारत में एकल अभिभावक परिवार : समस्याएं एवं समाधान' से लिया गया है।)

अपने लिए समय नहीं

"मां होना वो सबसे जरूरी और विनम्र काम है–जो मैंने आज तक किया है। जब हम मातृत्व का जश्न मनाते हैं तो हमें उन मांओं को खास तौर पर धन्यवाद कहना चाहिए जो अपने बल पर बच्चों का पालन करती हैं। चलिए, ऐसी मांओं का साथ दें, हर दिन।" फेसबुक की सीओओ शेरिल सैंडबर्ग का इस साल मदर्स डे पर लिखा यह पोस्ट दुनिया भर में एकल मांओं के समर्थन के लिए प्रेरणा श्रोत बन गया।

सुरक्षा की कमी को शेरिल ने एकल मांओं के लिए सबसे बड़ी समस्या माना है। उनकी चिंता जायज है और यह पूरी दुनिया की महिलाओं के मामले में सही है। भारत में अकेली महिलाएं, चाहे वो विधवा हों या अन्य, उनके पास किसी प्रकार का सहयोग नहीं है। अपने पति को छोड़ चुकीं या जिन्हें पति ने छोड़ दिया, ऐसी महिलाओं को जीवित रहने के लिए कड़ी मेहनत करना पड़ता है। आर्थिक आजादी ज्यादातर एकल मांओं के सामने सबसे बड़ी चुनौती होती है। एक आकलन के मुताबिक, 35 प्रतिशत एकल मांओं को भोजन तक की गारंटी नहीं होती और कई को एक साथ दो–दो जगह काम करना पड़ता है। न केवल आय के लिए उन्हें दोगुनी मेहनत करनी पड़ती है बल्कि बच्चों को संभालने और उनकी देखभाल भी उन्हें अकेले ही करनी पड़ती है। एक दिन की बीमारी भी उनके लिए भारी पड़ जाती है। चूंकि उनके पास बच्चों की देखभाल करने के लिए कोई दूसरा नहीं होता, इसलिए उनके लिए खुद के लिए समय निकालना असंभव–सा हो जाता है।

गाथा एकल महिलाओं की

कालक्रम को बदला, पहले मां बनीं फिर शादी

वृत्तचित्र निर्माण करने वाली आनंदिता अविवाहित हैं और एक बेटे की मां हैं। आनंदिता के जीवन में कभी कोई पुरुष नहीं आया और न ही उन्होंने इसके लिए कभी प्रयास किया। लेकिन वे मां बनना चाहती थीं क्योंकि मां बनना उनके लिए किसी पुरुष के संसर्ग से कहीं अधिक एक संपूर्ण अहसास था। आनंदिता ने तब आईवीएफ तकनीक का सहारा लिया और ढाई वर्षों तक लगातार डॉक्टरी देखरेख में रहने के बाद गर्भधारण किया और अंततः एक बेटे की मां बनीं। बकौल आनंदिता, ''गर्भावस्था से लेकर आज तक मुझे कभी किसी की उपेक्षा या भेदभाव का शिकार नहीं होना पड़ा। न तो मेरे परिवार ने और न ही समाज ने कभी मुझे आलोचना की दृष्टि से देखा, बल्कि वे हर समय मेरी और मेरे बेटे की सुरक्षा के लिए आगे आते रहे।'' आनंदिता मानती हैं कि समाज के नियमों का खौफ हमारे मन में इस कदर समाया हुआ है कि हम कोई भी निर्णय लेने से पहले ही हिम्मत हार जाते हैं। हम मान लेते हैं कि समाज हमारा विरोध करेगा। लेकिन हर समय यह सही नहीं है। खासकर आज के संदर्भ में हम कह सकते हैं कि समाज की सोच में बदलाव आया है। लीक से हटकर कदम बढ़ाने पर शुरुआती रुकावटें जरूर आती हैं लेकिन अंततः समाज हमारा साथ जरूर देने लगता है। आखिर हम स्वयं एक समाज हैं। मेरे साथ भी ऐसा ही हुआ। यहां तक कि स्कूल के प्रिंसिपल तक मुझे भरोसा दिला रहे हैं कि मेरे साथ भेदभाव नहीं होगा। आनंदिता कहती हैं ''मैं 50 की उम्र में भी शादी कर सकती थी लेकिन तब शायद मैं मां होने के अहसास से वंचित रह जाती। इसलिए मैंने फैसला किया कि मैं कालक्रम को पलट दूंगी और पहले मां बनूंगी, फिर जरूरत पड़ने पर शादी करूंगी।'' आनंदिता ने बताया कि यूरोप में रहते हुए वे एकल मांओं के संपर्क में आईं और उन्होंने महसूस किया कि ये महिलाएं एक नई सोच और परंपरा का बीज बो रही हैं और उन्हें भी इसमें सहभागी बनना चाहिए।

(टाइम्स ऑफ इंडिया, 30 अक्टूबर, 2015)

कुछ ने दिया साथ, कुछ ने छोड़ा

55 साल की कालिदासी हालदार भी एक बच्चे की मां हैं। उन्होंने कभी शादी नहीं की क्योंकि वे मां बनना चाहती थीं, पत्नी नहीं। कालिदासी कहती हैं कि इस अनुभव के बाद मैंने पाया कि लोग दो तरह के होते हैं– एक, जो आपसे दूरी बना लेते हैं और दूसरे, जो आपका स्वागत खुले दिल से करते हैं। वे कहती हैं ''मुझे गर्भावस्था और उसके बाद भी अपने सहकर्मियों व संबंधियों का पूरा सहयोग मिला। मेरे सहकर्मी न केवल मुझे लेकर अस्पताल गए बल्कि बच्चे के होने के बाद मुझे घर तक पहुंचाया और मेरी देखरेख भी करते रहे।'' कालिदासी लड़कियों को शिक्षा देने तथा उन्हें आत्मनिर्भर बनाने पर जोर देती हैं क्योंकि केवल तभी वे एकल मां बनने जैसा मुश्किल फैसला ले सकती हैं।

(टाइम्स ऑफ इंडिया, 30 अक्टूबर, 2015)

एकल मांओं को बीमार पड़ने का भी हक नहीं

फेसबुक की चर्चित सीओओ शेरिल सैंडबर्ग एकल मां हैं। शेरिल की शादीशुदा जिंदगी खुशहाल थी लेकिन एक साल पहले उनके पति की मौत दिल का दौरा पड़ने से हो गई। उस हादसे के बाद पहली बार मदर्स डे पर अपना दर्द सार्वजनिक रूप से बांटते हुए शेरिल ने फेसबुक पर लिखा ''मेरे लिए यह नई और अनजान दुनिया है। इससे पहले मुझे एकल मांओं की तकलीफों का अंदाजा तक नहीं था लेकिन अब मैं कह सकती हूं कि उनकी जिंदगी कितनी मुश्किल और जटिल होती है।'' इससे पहले, 2013 में अपनी एक किताब में शेरिल ने अपने पति और बच्चों के प्यार भरे साथ पर एक किताब लिखी थी जिसमें उन्होंने अच्छे जीवनसाथी को महिलाओं के लिए सबसे जरूरी बताया था। अब जबकि शेरिल के साथ उनका जीवनसाथी नहीं है और वे एकल मां हैं तो उन्होंने स्वीकार किया कि किताब लिखते समय उन्हें दुनिया की उन करोड़ों मांओं का ध्यान नहीं आया जो बिना जीवनसाथी के अकेले बच्चों को पाल रही हैं या जिनके जीवनसाथी सहयोगी प्रकृति के नहीं हैं और उनका उत्पीड़न करते हैं। शेरिल कहती हैं कि अब वे समझ चुकी हैं कि एकल मांओं को बीमार पड़ने या ब्रेक लेने तक का अधिकार नहीं है।

(योरस्टोरी.कॉम, 19 मई, 2016)

बच्चों के सवालों का देना होगा जवाब

बेंगलुरु के एक स्कूल में शिक्षिका इंदु रेबेका वर्गीज एक एकल मां हैं। वे कहती हैं कि भारत में औरतों का अकेले रहना तकलीफदेह है। आप हमेशा खुद को राशन की दुकान, स्कूल, डॉक्टर या डांस क्लास में पाती हैं। आपके पास अपनी तकलीफ बांटने या काम साझा करने के लिए कोई नहीं होता। इंदु कहती हैं कि एकल मांओं के लिए सबसे मुश्किल होता है अपने बच्चों के सवालों का जवाब देना। ऐसे में सबसे अच्छा है कि उन्हें सच्चाई बताई जाए ताकि वे अपने जीवन में आगे आने वाली चुनौतियों का सामना साहस के साथ कर सकें।

(योरस्टोरी.कॉम, 19 मई, 2016)

एकल औरतों को चाहिए सहयोग

लता धड़ासे विदर्भ से हैं और विधवा हैं। उनके पति के पास 3 एकड़ जमीन थी लेकिन फसल अच्छी नहीं होने की वजह से तीन साल तक लगातार उन्हें नुकसान होता रहा। उनके पति पद्माकर ने महाजन से कर्ज लेकर अच्छे बीज खरीदे क्योंकि उन्हें उम्मीद थी कि इस बार फसल अच्छी होगी और वे पूरा कर्ज उतार देंगे, लेकिन दुर्भाग्यवश ऐसा नहीं हुआ। कर्ज के बोझ तले दबे पद्माकर ने 2008 में आग लगाकर जान दे दी। इसके बाद लता दो बच्चों और बूढ़ी सास के साथ पूरी दुनिया में अकेली रह गई। रही–सही कसर पड़ोसियों और रिश्तेदारों ने ताने मारकर पूरी कर दी। लता 2014 में विदर्भ के एकल महिला संगठन के संपर्क में आईं और तब से उनका जीवन बदल गया। उन्होंने देखा कि वहां उनके जैसी और भी महिलाएं थीं। लता अब अपने जैसी औरतों के कल्याण और अधिकार के लिए काम करने लगीं और जल्दी ही अर्वी तालुका में संगठन की नेता भी बन गईं। वे आंगनबाड़ी सेविका हैं और अपने बच्चों और सास की ठीक से देखभाल कर पा रही हैं।

(सिंगल येस...बट नॉट अलोन, रिपोर्ट, एक्शनएड)

भाइयों ने भी नहीं दिया साथ

उड़ीसा के गंजम जिले में एक्शनएड, जिला प्रशासन और अन्य एकल महिला संगठनों के सहयोग से एकल महिलाओं को जमीन का वासगीत पर्चा दिलाने का कार्य किया गया है। उसी गंजम जिले में रहती हैं 50 साल की कोइली गौड़ा। कोइली अपनी बूढ़ी मां के साथ एक छोटे से कमरे में रहती हैं। कोइली कहती हैं कि वे भी शादी करके अपना घर बसाना चाहती थीं लेकिन एक तो गरीबी और दूसरे पिता की असाध्य बीमारी के कारण उनकी शादी नहीं हो सकी। पिछले 25 साल से वे साल के पत्ते बेचकर अपना और मां का गुजारा कर रही हैं। वैसे तो कोइली अपने पिता के घर में भाइयों के साथ रह रही हैं लेकिन भाइयों से उन्हें कोई सहयोग नहीं मिलता। कोइली ने जब भी पिता की संपत्ति में हिस्से की बात की, भाइयों ने अनसुना कर दिया। कोइली कहती हैं कि वे पंचायत में अपने अधिकार की बात उठा सकती है लेकिन इससे उनके भाइयों की बदनामी होगी और ये उन्हें अच्छा नहीं लगेगा। जब एक्शनएड ने उन्हें बताया कि अब उन्हें जमीन का पट्टा दिया जाएगा तो उन्हें अपने कानों पर विश्वास ही नहीं हुआ। वे कहती हैं कि इस उम्र में अब वे अपनी जिंदगी फिर से जी सकती हैं।

(सिंगल येस...बट नॉट अलोन, रिपोर्ट, एक्शनएड)

चारों बेटों ने छोड़ा साथ

गुजरात की चंपाबेन कोली 60 साल की विधवा हैं और अपने चार बेटों के साथ देसलपर गांव में रहती हैं। पति की मौत के बाद अपने बेटों के पालन–पोषण के लिए उन्होंने अकेले ही कड़ी मेहनत की और मजदूरी कर उन्हें काबिल इंसान बनाया। उनके चारों बेटों की शादी हो चुकी है और वे सब अपने–अपने परिवार के साथ रहते हैं लेकिन चंपाबेन को कोई भी अपने साथ नहीं रखता। वे अकेले रहती हैं और जीवित रहने के लिए आज भी मजदूरी करती हैं। कुछ दिनों पहले उनका भतीजा दूसरे गांव से आया और अपने परिवार को रखने के लिए उनकी झोपड़ी में शरण मांगी। उसकी मदद करने के लिए चंपाबेन घर से बाहर एक कुटिया बनाकर रहने लगीं और झोपड़ी भतीजे को दे दी। अब भतीजे ने उनकी झोपड़ी पर कब्जा कर लिया और उन्हें घर से बाहर कर दिया। बेटे भी इसके लिए चंपाबेन को ही दोषी ठहराने लगे। हर ओर से दुखी चंपाबेन ने तब एकल नारी शक्ति मंच से मदद मांगी जिसके बाद पंचायत में मामला उठाया गया और तीन

दिनों के भीतर बेटों ने अपनी गलती मानी और मां को भोजन और 100–100 रुपए देने की बात स्वीकारी। सरपंच ने भी चंपाबेन का ध्यान रखने का भरोसा दिलाया।

(सिंगल येस...बट नॉट अलोन, रिपोर्ट, एक्शनएड)

पहले खुद का करो सम्मान

फियोना कैरोलिन रिटेल व एजुकेशन मैनेजर हैं और अपने तीन बेटों के साथ मुंबई में रहती हैं। फियोना बताती हैं कि शादी टूटने के बाद वे अचानक अपने बच्चों के साथ सड़क पर आ गईं। न तो उनके सिर पर छत थी और न ही निर्वाह करने के लिए नौकरी। शादी के पहले वे कंप्यूटर प्रोग्रामर के तौर पर काम करती थीं लेकिन शादी के बाद से उनका आईटी कंपनियों से भी कोई संपर्क नहीं रह गया था। वे शरण लेने के लिए अपनी मां के यहां गईं लेकिन कुछ दिनों के बाद ही मां का रवैया बदलने लगा और उनका साथ दिया पड़ोसियों ने। फियोना को शुरुआत में एक हजार रुपये की नौकरी मिली जिसमें से उन्होंने मां को किराया देना शुरू किया। लेकिन लगातार कोशिश करते रहने से अंततः उन्हें अच्छी जगह नौकरी मिल गई। फियोना बताती हैं कि पड़ोसी अकसर उनसे पूछा करते कि क्या वो हमेशा अपनी मां के यहां ही रहेगी। तब उन्होंने तय किया कि अगर वे खुद को सम्मान की नजर से देखेंगी तो पूरा समाज भी उन्हें सम्मान की नजर से देखेगा। तब से इस साहसी महिला ने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा और अपने बल पर तीनों बेटों का पालन–पोषण किया। वे कहती हैं ‘‘लोग पूछते हैं कि क्या आपको अकेलापन नहीं लगता। मेरा जवाब यही होता है कि मेरे पास अकेलेपन के लिए समय ही नहीं है।’’ अब फियोना के दो बेटे नौकरी कर रहे हैं लेकिन फियोना ने अपने लिए बचत की है और वे नहीं चाहतीं कि उन्हें अपने बेटों पर निर्भर रहना पड़े।

(नारी.कॉम)

पहले खुद का करो सम्मान

महाराष्ट्र के थाणे जिला के मालघर गांव की 70 साल की देवकी अपनी व अपने पति की मेहनत से बनाये घर की एक दीवार के साथ छोटी सी झोपड़ी बांध कर रहने के लिये मजबूर है। उम्र के इस पड़ाव पर झोपड़ी की मरम्मत करना उसके बस का नहीं है, इसलिये वह रात कांपते हुए गुज़ारती है। देवकी के तीन बेटे थे और वह अपने पति के साथ दूसरे की जमीन पर मजदूरी कर संतोष से जीवन काट रही थी। लेकिन जब बेटा बड़ा हुआ तो उसे शराब पीने की लत लग गई और उसकी बेकारी के कारण उसकी पत्नी की भूख से मौत हो गई। कुछ दिनों के बाद उसके बेटे और पति की भी बीमारी से मौत हो गई। उसके बाद देवकी को छोटे बेटे–बहू ने घर से निकाल दिया। उसकी छोटी–सी झोपड़ी पर भी उनकी नजर रहती है। उनके स्वभाव के कारण गांववाले देवकी का पक्ष लेकर नहीं बोल पाते हैं। देवकी को न तो घर में वापस आने दिया जाता है और न ही अपने पोते–पोतियों से मिलने दिया जाता है। उसकी जिंदगी विलाप करते हुए ही बीत रही है। उसके पास केवल एक बैलों का जोड़ा जिसे किराये पर देकर उसके बदले जो अनाज मिलता है और गांव के अन्य परिवारों के लिये छोटा–मोटा काम कर जो वो कमा पाती है, उसी पर अपना जीवन चला रही है।

(हमारी उपेक्षा कब तक : राष्ट्रीय एकल नारी अधिकार मंच)

परिवार के लिए नहीं की शादी

44 वर्ष की सईदा शेख ने निकाह नहीं किया है। उनका एक पैर दूसरे से छोटा है और वे लंगड़ाकर चलती हैं। उनका परिवार महाराष्ट्र के बिदर क्षेत्र से है। गांव में उनके परिवार की थोड़ी–बहुत ज़मीन थी जिस पर खेती से घर चलता था। वे 2 भाइयों और 3 बहनों में सबसे बड़ी थीं। जब वे सात साल की थीं, तो उनके पिता उन्हें छोड़ कर चले गये। उन्हें ढूंढने की काफ़ी कोशिश की गई लेकिन कुछ पता नहीं लग सका। पिता के चले जाने के बाद सारी ज़िम्मेदारी उनकी मां पर आ गई। गांव वाले मां को परेशान करने लगे, वे उन्हें तरह–तरह की बातें कहते, ताने कसते, गाली–गलौच करते। जब यह सब असहनीय हो गया तो उनका परिवार गांव छोड़ कर मुम्बई आ गया जहां उनकी एक मौसी रहती थीं और उन्होंने सबके रहने के लिये एक खोली का इंतज़ाम कर दिया। घर चलाने के लिये सईदा और उनकी मां ने दूसरे के घरों में घर का काम करना शुरू किया। छोटी बहनें भी घरों में काम करने लगीं। कुछ समय बाद मां मध्य–पूर्व के एक देश में काम करने के लिये चली गईं लेकिन वह बीमार पड़ गई और उन्हें वापस भारत भेज दिया गया। मां को ठीक करने के लिए पैसे की जरूरत थी इसलिए उन्होंने भी मध्य–पूर्व में जाकर काम करने का निर्णय किया। कड़ी मेहनत की और मां का इलाज कराया। परिवार की ज़िम्मेदारी और विकलांगता की वजह से सईदा ने कभी शादी करने का नहीं सोचा।

(हमारी उपेक्षा कब तक : राष्ट्रीय एकल नारी अधिकार मंच)

मंजरी

स्त्री के मन की

Sulabh International
Social Service Organisation

THE OFFSETTERS (INDIA) PRIVATE LIMITED
design, pre-press and color offset printing

takshila
connect
to the
universe

bansal
FOR CLASS : VI, VII, VIII, IX, X, XI & XII, IIT-JEE (MAINS & ADVANCED) & MEDICAL ASPIRANTS
TUTORIALS

We Care
I S
INTERNATIONAL SCHOOL

COMFED
PRIDE OF BIHAR
Sudha

आप हमें ई–मेल करें

आप हमें अपने लेख और पत्र ई–मेल भी कर सकते हैं। इस विषय में विशेष जानकारी equityasia@gmail.com पर ली जा सकती है। प्रकाशक की अनुमति के बिना पत्रिका में प्रकाशित किसी भी सामग्री का अन्यत्र इस्तेमाल करना कॉपीराइट का उल्लंघन माना जाएगा।

© : इक्विटी फाउंडेशन